केलि कुञ्ज

विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ

सारी कहती है—रानी! वे गायोंके साथ नन्द-भवनके द्वारसे बाहर हुए ही थे कि मैं तुम्हें सूचना देने आ गयी हूँ।

इस सूचनासे रानीकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं रहती। वे सारीको हृदयसे लगा लेती हैं। सारी भी प्रेममें डूबने लग जाती है। सबके मनमें आनन्द छा जाता है। सबको संदेह था कि पता नहीं, श्यामसुन्दर आज आयेंगे या नहीं; पर सारीकी बातसे सबकी चिन्ता मिट गयी, सभी आनन्दमें विभोर हो गयीं। रानी सारीको हाथमें बैठाये रखकर ही उसे प्यार करने लग जाती हैं। साथ ही उत्कण्ठाभरी दृष्टिसे श्यामसुन्दरके आनेके पथकी ओर बार-बार देखती भी जाती हैं। रानी फिर भी कुछ व्याकुल हो जाती हैं। सारी हाथपरसे उड़कर नीचे भूमिपर बैठ जाती है। रानी उठकर खड़ी हो जाती हैं। थोड़ी देर खड़ी रहकर फिर जिस बेंचके सहारे वे बैठी हुई थीं, उसपर बैठ जाती हैं। इस बार उनका मुख पूर्वकी ओर हो जाता है तथा पीठ बेंचके हत्थेपर टेककर उसी बेंचपर पैर फैलाकर बैठ जाती हैं। फिर धीरेसे कहती हैं—सारिके! इधर आ!

सारी उड़कर चरणोंके पास जो बेंचका हत्था था, उसपर बैठ जाती है। रानी पूछती हैं—सारी! क्या तेरे-जैसे मुझे भी पंख हो सकते हैं?

सारी—रानी! पंख लेकर क्या करोगी?

राधारानी—पंख होते··· ··· ··· ···, मैं भी तेरी तरह उड़-उड़कर प्रियतम श्यामसुन्दरको देखती फिरती। जहाँ जिस कुञ्जमें रहते, वहीं उड़कर चली जाती।

सारी चुप हो जाती है। कुछ भी उत्तर नहीं देती। राधारानी फिर पूछती हैं—अच्छा सारिके! बता तो सही, श्यामसुन्दर मुझे क्यों प्यार करते हैं?

सारी कुछ देर चुप रहकर रानीके मुखमण्डलकी ओर देखती है। फिर कहती है—रानी! कभी श्यामसुन्दरसे पूछकर बताऊँगी।

राधारानी—पर देखना भला, वे कहीं तुम्हें ठग नहीं लें।

सारी—मेरी प्यारी रानी! वे मुझे नहीं ठगेंगे। मुझको भी वे बहुत प्यार करते हैं।

राधारानी प्रसन्न-सी होकर कहती हैं—अच्छा, तुझे क्यों प्यार करते हैं, यह बता !

सारी कहती है—रानी ! एक दिन मैं उड़कर गयी । वहाँ जाते ही श्यामसुन्दरने मुझे हाथपर उठा लिया । हाथपर रखते ही उनकी आँखोंसे आँसू झरने लगे । कण्ठ रुँध गया । फिर कुछ देर बाद धैर्य धारण करके बोले कि सारिके ! तुम्हें देखते ही मेरे प्राण व्याकुल हो जाते हैं । तू मेरी प्राणेश्वरी राधाकी सारी है । आह ! मेरी प्रियाने अपने हाथोंसे स्पर्श करके तुम्हें मेरे पास भेजा होगा । सारी ! आ, मेरे हृदयमें बैठ जा । सच, सारी ! देख, मैं तुम्हें जिस क्षण हाथपर लेता हूँ, उसी क्षण मुझे चारों ओर मेरी प्यारी राधा-ही-राधा दीखने लग जाती है । सारी ! इसीलिये तू मुझे प्राणके समान प्यारी लगती है ।

रानीके मुखपर गम्भीरता छा जाती है । वे कुछ देर चुप रहकर कहती हैं—सारी ! एक बात पूछती हूँ, तू ठीक-ठीक बतायेगी न ?

सारी—हाँ रानी ! अवश्य बताऊँगी ।

राधारानी—अच्छा, बता, कोई ऐसी औषधि तू जानती है कि जिसके खानेसे मैं मर जाऊँ !

सारी कुछ देर चुप रहकर सोचती है । इसी समय ललिता दबे पाँव मुस्कुराती हुई पश्चिमकी ओरसे आ जाती है । रानी इस प्रकार तल्लीन हो रही थीं कि ललिताके आनेका उन्हें तनिक भी पता नहीं लगता । ललिता राधारानीकी बात सुन लेती है तथा सारीको कुछ संकेत करती है । ललिताके संकेतको सारी समझ जाती है । इसी बीचमें राधारानी फिर कहती हैं—हाँ, सारी ! सच, बड़ी विनयसे पूछती हूँ कि मैं मर सकूँ, इसके लिये तू कोई उपाय बता सकती है ?

सारी कहती है—रानी ! मरकर क्या करोगी ?

राधारानी—देख, मरकर सदाके लिये श्यामसुन्दरके चरणोंमें चिपट जाऊँगी । मेरी देह ही मुझे श्यामसुन्दरसे अलग रख रही है ।

सारी—पर रानी ! फिर श्यामसुन्दरकी क्या दशा होगी, यह भी तुमने कभी सोचा है ?

राधारानी घबरा-सी जाती हैं तथा अत्यधिक त्वरासे कहती हैं—ओह ! मैं तो सचमुच भूल गयी । ना सारी ! मैं नहीं मरूँगी । आह ! मेरे मरते ही प्यारे श्यामसुन्दर जीवित नहीं रहेंगे । ओह ! मैं तो सर्वथा बावली हो गयी थी । ठीक समयपर तूने मुझे सावधान कर दिया । ना, अब मैं नहीं मरूँगी, कभी नहीं मरूँगी ।

अब रानी आँखें बंद करके कुछ सोचती हैं तथा फिर कहती हैं—सारी ! तू जानती है, श्यामसुन्दर आजकल कहाँ चले जाते हैं ?

रानीकी बात सुनकर सारी पुनः कुछ सोचने लगती है । रानी आँखें खोलकर फिर कहती हैं—हाँ, हाँ, बता, महीनों हो गये, वे इधर इन निकुञ्जोंमें तो आये ही नहीं । पता नहीं, कहाँ चले जाते हैं ?

राधारानीका मुख-मण्डल कुछ-कुछ लाल होने लग जाता है तथा वे भावाविष्ट होने लगती हैं । उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मैं प्रतिदिन इन कुञ्जोंमें आती हूँ, पर श्यामसुन्दर यहाँ नहीं आते, कहीं दूसरी जगह चले जाते हैं । इसी भावसे भावित होकर वे सारीसे फिर पूछने लगती हैं—हाँ, तू तो उड़ सकती है, उड़कर देखती होगी, वे कहाँ चले जाते हैं ? कहीं मार्ग तो नहीं भूल जाते ? हाँ, सारी ! वे बड़े सरल हैं, उन्हें कोई भी भुलावा दे सकता है ··· ··· ··· ··· ···।

रानीकी आँखोंसे छल-छल करके आँसू बहने लग जाते हैं । ललिता पीछे खड़ी थी । वे सामने आ जाती हैं तथा रानीके सिरके पास घुटने टेककर भूमिपर बैठ जाती हैं । रानीकी दृष्टि ललितापर नहीं जाती । वे भाव-समाधिमें अधिकाधिक डूबती जा रही हैं । ललिता कुछ देरतक रानीकी ओर एकटक देखती रहती हैं । राधारानी भी कुछ देरतक आँख बंद किये रहती हैं, कुछ भी नहीं बोलतीं । फिर एकाएक कह उठती हैं—सारी ! जा, ललिताको बुला ला !

रानीकी बात सुनकर ललिता वहीं उस बेंचकी कोरपर बैठ जाती हैं तथा कहती हैं—क्यों बहिन ! मैं तो तेरे पास ही हूँ ।

ललिताकी बात सुनकर राधारानी कहती हैं—अच्छी बात है, तू आ गयी । देख, तुम्हें एक बात सुनाती हूँ । धैर्यसे सुनना, घबराना मत भला !

ललिता—ना बहिन! मैं शान्तिसे सुनूँगी, घबराऊँगी नहीं, तू सुना।

राधारानी—देख, मुझे एक रोग हो गया है। मैं अबतक तुमलोगोंसे छिपाती रहती थी, पर आज मेरे जीवनका अन्तिम क्षण उपस्थित है, इसलिये तुमसे सब बात खोलकर कह देना चाहती हूँ। क्यों, सुनकर अशान्त तो नहीं हो जायेगी?

ललिताकी आँखोंमें प्रेमके आँसू भर आते हैं। वे कहती हैं—ना, मैं अशान्त नहीं होऊँगी। तू अपना अन्तर खोलकर बता।

राधारानी—देख, तुझे याद होगा, आजसे हजारों-हजार वर्ष पहले मैंने श्यामसुन्दरको केवल एक बार देखा था। बस, इसके बाद फिर उन्हें मैंने कभी नहीं देखा।* हाँ बहिन! बस, एक बार ही देख पायी; पर उसी क्षणसे उनकी वह छवि मैं अपने हृदयमें छिपाये बैठी हूँ! तुम सबसे भी

---

*प्रेमकी ऊँची अवस्थामें जब प्यारेका एक क्षणके लिये भी वियोग होता है, तब वह एक क्षण ही युगके समान प्रतीत होने लग जाता है। श्रीश्यामसुन्दर जब वनको चले जाते थे तो श्रीगोपीजनोंको उनका विरह इतना दुखदायी हो जाता था कि एक त्रुटि भी उनके लिये युगके समान प्रतीत होने लगती थी। यह वर्णन श्रीमद्भागवतमें ही आया है। इसी प्रकार राधारानीके हृदयमें जो भाव-तरंगें उठती हैं, वे तो सर्वथा असीम-अतुलनीय हैं। जब कभी श्रीप्रियाको श्यामसुन्दरके विरहकी अनुभूति एक क्षणके लिये भी होती है, उस समय उन्हें ऐसा प्रतीत होता है मानो युग बीत गये हैं और तबसे मैंने श्यामसुन्दरको नहीं देखा है। यद्यपि प्रतिदिन श्रीप्रियासे श्यामसुन्दरका मिलन होता है, पर प्रिया भावाविष्ट होकर यह समझने लगती हैं कि मेरा यह मिलन भावनासे प्रतीत होने लग गया था। ध्यान करते-करते मैं सुध-बुध भूल जाती हूँ और कुछ-का-कुछ सोचने लगती हूँ। वस्तुतः श्यामसुन्दर तो हजारों-हजार वर्षसे मेरे पास आये ही नहीं हैं। उसी प्रकार आज भी श्रीप्रियाको भ्रम हो रहा है कि श्यामसुन्दरसे मिले बहुत दिन हो गये। प्रेमकी इस अवस्थाको कोई वाणीसे नहीं बता सकता। बिरले सच्चे संत ही उसे अनुभव करके कृतार्थ होते हैं।

छिपाती रही। दिन-रात उन्हें हृदयमें बैठाये रखकर भावनासे उनकी रूप-सुधाका पान करती रही हूँ। बहिन! पर साथ ही जलती भी रही हूँ। वह विचित्र-सी दशा है। रूप-सुधाके समुद्रमें डूबी रहकर भी मैं जलती रही हूँ। कभी यह भ्रम हो जाता था कि प्यारे श्यामसुन्दर आये हैं, मुझे अत्यन्त प्यार कर रहे हैं। बस, इसी आनन्दमें रात समाप्त हो जाती। फिर सोचती कि ना, यह तो सचमुच मुझे भ्रम हो गया था। हृदयमें बैठाये रखकर श्यामसुन्दरके साथ मैं भावनाका आनन्द लूटने लगती हूँ। इसी प्रकार हजारों-लाखों वर्ष बीत गये हैं। मैं एक क्षणमें तो आनन्दके समुद्रमें डूबने लगती हूँ और दूसरे ही क्षण हृदय विरहाग्निसे दग्ध होने लगता है। इस प्रकार हँसती हुई, जलती हुई मैंने इतने दिन बिताये हैं; पर अब तो हृदय दग्धप्राय: हो गया है। अब थोड़ी देरमें मेरे प्राण बाहर निकल जायँगे। हाँ, बहिन! बस, एक बार मुझे अपनी रूप-सुधाका पान कराकर फिर वे नहीं आये। पता नहीं, कहाँ चले गये? प्रतीक्षामें इतने दिन बीत गये, अब आज अन्तिम दिन है ....।

रानी यह कहकर रुक जाती हैं। ललिता कुछ भी नहीं बोलती। वे एकटक श्रीप्रियाके मुखारविन्दकी ओर देखती रह जाती हैं। रानी फिर कहने लगती हैं—हाँ, अब देख! तुझे हृदयको कठोर बनाना पड़ेगा। बहिन! तू मुझे अतिशय प्यार करती है। मेरे विरहमें, पता नहीं, तेरे प्राण रहेंगे या नहीं। पर बहिन! कुछ क्षणके लिये धीरज रखना! देख, अब अधिक देर नहीं है; मेरे प्राण निकलनेवाले ही हैं। तू मेरे प्यारे श्यामसुन्दरके उस चित्रको मेरे हृदयपर रख दे। जब प्राण निकल जायँ, तब उस चित्रको मेरे अञ्चलसे बाँध देना। भली भाँति कसकर बाँध देना तथा उस चित्रके साथ ही मेरे प्यारे श्यामसुन्दरके कुण्डमें मेरी समाधि दे देना। देख, धीरजसे अपनी प्यारी सखीकी यह अन्तिम सेवा करना।

यह कहकर रानी रुक जाती हैं। उनकी दशा देखकर ललिता अतिशय व्याकुल होकर सोचने लगती हैं कि क्या उपाय करूँ, जिससे प्यारी सखीको सान्त्वना मिले। कुछ क्षण सोचकर वे राधारानीके कानमें कहती हैं—बहिन! प्यारे श्यामसुन्दर आ गये हैं। वह देखो, विशाखाके कुञ्जकी पगडंडीपर खड़े हैं।

रानीके कानोंमें ये शब्द पड़ते ही वे चटपट उठकर बैठ जाती हैं तथा कुछ लजायी-सी होकर उधर ही देखने लगती हैं। दृष्टिके सामने विशाखाके कुञ्जकी पगडंडीपर नीली साड़ी पहने तथा पीले रंगकी ओढ़नी कंधेपर रखे हुए उसी समय अनङ्गमञ्जरी आ जाती है। उसकी नीली साड़ीको एवं पीले रंगकी ओढ़नीको देखकर श्रीप्रिया समझने लगती हैं कि सचमुच श्यामसुन्दर आ रहे हैं, अतः उन्हें धैर्य हो जाता है। फिर वे धीमे स्वरमें कहने लगती हैं—देख, प्यारे श्यामसुन्दर आ रहे हैं। मैं छिप जाती हूँ। तू कह देना कि राधा तो आज नहीं आ सकेगी। आज देखूँगी कि वे मुझे ढूँढ़ने कहाँ जाते हैं!

राधारानी यह कहकर खड़ी हो जाती हैं तथा दौड़ने लगती हैं। वे दक्षिणी मेहराबके भीतरसे दौड़ती हुई दक्षिण दिशाकी ओर दौड़ने लग जाती हैं। ललिता देखती हैं कि मेरी सखी भावावेशमें ही दौड़ रही है और कहीं गिर न पड़े, अतः उन्हें सँभालनेके लिये उसके पीछे दौड़ने लगती हैं। रानीके मनमें तो यह बात है कि श्यामसुन्दर उत्तरकी ओरसे आ रहे हैं, इसलिये वे निधड़क दक्षिणकी ओर तीव्र गतिसे चली जा रही हैं। इसी समय श्यामसुन्दर चम्पकलताके कुञ्जके दक्षिणी द्वारसे आकर वहाँसे कुछ दूरपर खड़े होकर रानीका भागना देखने लग जाते हैं। रानीकी दृष्टि श्यामसुन्दरपर नहीं पड़ती। वे चटपट मेंहदीकी क्यारीसे घिरे हुए गुलाबकी लताओंके निकुञ्जमें चली जाती हैं तथा वहाँ खड़ी होकर उत्तरकी ओर देखने लगती हैं कि श्यामसुन्दर आ रहे हैं या नहीं।

ललिताकी दृष्टि श्यामसुन्दरपर पड़ जाती है। वे बहुत प्रसन्न हो जाती हैं तथा आँखोंके प्रेमपूर्ण संकेतद्वारा श्यामसुन्दरको बतला देती हैं—आज रानी बहुत अधिक भावाविष्ट हो गयी थीं; किसी प्रकार हमने उसे कुछ शान्त किया है। अब अपनी प्राणप्यारीको तुम सँभालो!

श्यामसुन्दर मुस्कुराने लगते हैं तथा दबे पाँव उसी मेंहदीकी क्यारीके दक्षिणकी ओर आकर खड़े हो जाते हैं। वे मेंहदी-लताके छिद्रोंसे देखने लगते हैं कि मेरी प्यारी राधा क्या कर रही है! इधर राधारानी कुछ देरतक उत्तरकी ओर देखनेके बाद दक्षिणकी ओर देखने लग जाती हैं। फिर वे पश्चिमकी ओर एवं इसके बाद पूर्वकी ओर मुख करके धमसे

भूमिपर बैठ जाती हैं। इतनेमें ललिता निकुञ्जके भीतर, जहाँ रानी बैठी हैं, वहाँ आ जाती हैं तथा कहती हैं—बहिन ! अब श्यामसुन्दर ढूँढ़ते फिरेंगे। बड़ा अच्छा हुआ। प्रतिदिन देर करने लगे थे। आज पता लगेगा कि प्रतीक्षा करते समय कितना दुःख होता है।

रानी कुछ उदास-सी हो जाती हैं तथा कहती हैं—ललिते ! यदि प्यारे श्यामसुन्दर मुझे ढूँढ़ते फिरें और मैं नहीं मिलूँ तो भला उन्हें कष्ट तो नहीं होगा ?

एक-दो क्षणके उपरान्त रानी फिर तुरंत बोल उठती हैं—ना बहिन ! मैं नहीं छिपूँगी। हाय ! उनके कोमल हृदयको दुखा करके मैं आनन्द प्राप्त करना चाहती हूँ ? ओह, नहीं ! नहीं !! चल, मैं वहीं फव्वारेके पास जाऊँगी।

श्यामसुन्दर छिपे-छिपे श्रीप्रियाकी बात सुन रहे हैं तथा आनन्द एवं प्रेममें अधिकाधिक विभोर होते जा रहे हैं। राधारानी चटपट उठकर पुनः भागना चाहती हैं, पर ललिता उन्हें इस बार पकड़कर रोक लेती हैं, जिससे रानी फिर वहीं बैठ जाती हैं। राधारानी कहने लगती हैं—अच्छा बहिन ! तू मुझे नहीं जाने देती तो एक काम कर ! तू वहाँ चली जा। वे फव्वारेके पास खड़े होकर अत्यन्त व्याकुलतासे मुझे ढूँढ़ रहे होंगे। हाय ! हाय !! निराश हो गये होंगे. ओह ! उनका मुख म्लान हो गया होगा। बहिन ! मैं इसे सह नहीं सकूँगी। तू तुरंत जा। उन्हें कह दे कि राधा उस निकुञ्जमें बैठी उनकी बाट देख रही है।

ललिता तुरंत उठकर चली जाती हैं तथा बाहर श्यामसुन्दरके पास आकर उन्हें सब बातें धीरे-धीरे संक्षेपमें बता देती हैं। इधर राधारानी इस प्रतीक्षामें हैं कि ललिताके साथ श्यामसुन्दर आनेवाले ही हैं, इसलिये कभी उठकर निकुञ्जके बाहर झाँकने लगती एवं कभी पुनः बैठकर उत्सुकताभरी दृष्टिसे देखने लग जाती हैं।

निकुञ्जमें फूलोंकी एक शय्या है। रानी उसी शय्यापर जाकर लेट जाती हैं तथा आँखें बंद करके धीरे-धीरे कुछ गुनगुनाने लगती हैं। श्यामसुन्दर एवं ललिता मेंहदी-लताके छिद्रोंसे झाँककर श्रीप्रियाकी

प्रेम-लीला देख रहे हैं। श्रीप्रिया एक पद गुनगुना रही हैं। वह स्पष्ट सुन नहीं पड़ता; पर बीच-बीचमें इसके दो-एक शब्द सुनायी पड़ते हैं। कुछ देरतक इस प्रकार गुनगुन करती हुई वे फिर उठ बैठती हैं तथा अपनी दोनों तलहथीपर अपना मुख रखकर कुछ सोचने लग जाती हैं। फिर वे कहती हैं—प्यारे श्यामसुन्दर! हृदयका कोना-कोना तुम्हारा है। हाँ, मेरे जीवनसर्वस्व! इस हृदयको प्रतिदिन तुम्हारे लिये ही सजा-सजाकर रखती हूँ। देखो, आज भी तेरे ही लिये इसे सजाकर तेरी प्रतीक्षामें बैठी हूँ; पर पता नहीं, तुम क्यों नहीं आ रहे हो?

विकलताके कारण श्रीप्रिया उठकर खड़ी हो जाती हैं। वे बावली-सी होकर निकुञ्जके बाहर निकल पड़ती हैं। बाहर निकलते ही और भी भावाविष्ट हो जाती हैं। निकुञ्जके द्वारपर पत्तोंका बना हुआ खेलका एक झूला था। उसे देखकर उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगता है कि मैं झूलेपर झूल रही हूँ और प्यारे श्यामसुन्दर बहुत वेगपूर्वक झोंटा दे रहे हैं, जिससे मेरी साड़ी पवनके झोंकोंमें उड़ रही है। इस बार इतने वेगसे झोंटा लगा है कि मेरी साड़ीका अञ्चल नीचे गिर गया है तथा गुलाबके काँटोंमें उलझ गया है। रानी फिर ऐसा अनुभव करने लगती हैं कि मैं रूठ गयी हूँ तथा झूलेको बलपूर्वक रोक करके उतर पड़ी हूँ। प्यारे श्यामसुन्दर भी मेरे पीछे उतर पड़े हैं तथा मुझसे कह रहे हैं—ना, अब ठीकसे धीरे-धीरे झोंटा दूँगा। प्रिये! फिर चलो, झूलो।

इसी भावावेशमें श्रीप्रिया दृष्टि-विहीन-सी होकर उस मेंहदीकी क्यारीकी परिक्रमा लगाने लगती हैं और 'ना, अब नहीं झूलूँगी, अब नहीं झूलूँगी' कहती हुई वहाँ पहुँच जाती हैं, जहाँ श्यामसुन्दर खड़े हैं। वे इसी भावावेशमें श्यामसुन्दरसे टकरा जाती हैं। श्यामसुन्दरका स्पर्श होते ही श्रीप्रिया समझने लगती हैं कि वे मुझे आग्रहपूर्वक झूलेपर ले जाना चाहते हैं। इसलिये श्रीप्रिया प्रेममें अतिशय अधीर हो जाती हैं तथा बाहरसे कपट-क्रोध करती हुई उसी भावावेशमें वहाँ खड़े हुए श्यामसुन्दरका हाथ वस्तुतः पकड़ लेती हैं एवं कहती हैं - देखो! अब यों नहीं झूलूँगी। लाओ, यह तुम्हारा पीताम्बर! मैं इसे कसकर अपने ऊपर बाँध लूँगी। फिर कोई बात नहीं।

श्यामसुन्दर श्रीप्रियाके हृदयके भावावेशको जान लेते हैं और सचमुच हँसकर अपना पीताम्बर श्रीप्रियापर ओढ़ाने लग जाते हैं तथा कहते हैं—प्रिये ! तू जो कहेगी, वही करूँगा ।

श्यामसुन्दरके इन वचनोंके कानोंमें पड़ते ही श्रीप्रिया प्रकृतिस्थ हो जाती हैं । वे देखती हैं कि प्यारे श्यामसुन्दर मुझे पीताम्बर ओढ़ा रहे हैं । रानीको सारी बातें स्मरण हो आती हैं तथा वे सकुचा जाती हैं । श्यामसुन्दर उन्हें अपने हृदयसे लगा लेते हैं । ललिता खिलखिलाकर हँस पड़ती हैं । सखियाँ और दासियाँ दौड़ती हुई वहाँ आ जाती हैं तथा उनकी सेवाके कार्यमें लग जाती हैं ।

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

प्रतीक्षा लीला

श्रीप्रिया कदम्बरी चम्पाकी छायामें बैंचके आकारके अत्यन्त सुन्दर सिंहासनपर बैठी हैं। कुञ्जकी हरी-हरी दूबपर नीले मखमलकी मोटी चादर बिछी हुई है, उसीपर वह सिंहासन है। सिंहासन बना हुआ है काठका, पर उसमें सब ओरसे नीले मखमलकी गद्दी लगी हुई है। श्रीप्रियाके चरणोंके पास रूपमञ्जरी बैठी है तथा नीले रूमालसे धीरे-धीरे श्रीप्रियाके चरणोंके तलवे सहला रही है। श्रीप्रियाकी साड़ी नीली है। चूड़ामणि सिरपर है। ललाटमें सिन्दूरकी एक गोल बिंदी अत्यन्त सुहावनी लग रही है। ठोड़ीपर छोटा-सा एक काला तिल है। उनके दाहिने हाथमें डण्डीसहित कमल है, जिसे वे घुमा रही हैं। वे श्यामसुन्दरकी प्रतीक्षामें बार-बार राधाकुण्डके उत्तर एवं पूर्वकी ओर दृष्टि डालती हैं। कदम्बरी चम्पाके पूर्वकी ओर दस गजकी दूरीपर एक बड़ा ही सुन्दर आमका पेड़ है, जिसमें मञ्जरियाँ लगी हुई हैं। उसीपर कोयल बैठी हुई कुहू-कुहूकी रट लगा रही है। श्रीप्रिया कभी-कभी उस कोयलकी ओर देख लेती हैं।

चम्पाके पूर्व एवं उत्तरके कोनेपर अत्यन्त सुन्दर हरे बाँसकी झाड़ी लगी हुई है। उसमें चार-पाँच बहुत ऊँचे-ऊँचे बाँस हैं। उनमें मञ्जरी लगी हुई है। उसके सबसे ऊपरके भागपर कुछ तोते बैठे हैं। एक तोता बोल रहा है—राधे! राधे!! धीरज धरो! श्यामसुन्दर अब आ ही रहे होंगे। मैं अभी वहींसे उड़कर आया हूँ। माधवी कुञ्जके पास श्यामसुन्दर खड़े थे। उनके मुखपर अलकावली बिखरी हुई थी। कमरमें वंशी खोंसी हुई थी। लाल अधर बिम्बाफलके समान शोभा पा रहे थे। वे सुबलके कंधेपर बायाँ हाथ रखे हुए थे तथा दाहिने हाथसे पुष्प तोड़ रहे थे। कभी-कभी तिरछी चितवनसे इधर-उधर देख भी लेते थे। पैरोंके नूपुर रुनझुन-रुनझुन शब्द कर रहे थे। मधुमङ्गल मुँह बनाता हुआ आता था और

श्रीश्यामसुन्दर हँसकर कभी-कभी उसे हल्की चपत लगा देते थे। श्यामसुन्दरने पीताम्बरका ही झोला बना लिया था और उसीमें पुष्प तोड़कर रखते जाते थे। उनकी आँखोंमें अञ्जन लगा हुआ था। कपोलोंपर कुछ पसीनेकी बूँदें थीं। मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए उन्होंने सुबलके कानमें कुछ कहा था। मैं उसी समय उड़कर और भी निकट जा पहुँचा। मैंने केवल तुम्हारा नाम सुना, जिससे समझ गया कि तुम्हारी ही कुछ बात कह रहे थे। श्रीकृष्ण-प्रियतमे राधे! बस, अब आते ही होंगे।

तोता अत्यन्त सुन्दर मधुर स्वरमें बार-बार इस बातको दुहरा रहा है कि बस, बस, अब आते ही होंगे। उसी समय वृन्दादेवी निकुञ्जके पश्चिमकी ओरसे आती हैं। उनके हाथमें सोनेका पिंजरा है, जिसमें एक सुन्दर सारी बैठी है। वृन्दाके आते ही श्रीराधारानी कहती हैं—वृन्दे! उस तोतेको बुला।

वृन्दादेवी तोतेको आनेके लिये संकेत करती हैं। तोता तुरंत उड़कर आता है तथा जिस पिंजरेमें सारी बैठी है, उसीपर आकर बैठ जाता है। वृन्दा श्रीराधासे कहती हैं—अब बात करो!

श्रीराधा तोतेको बुलाती हैं। तोता उड़कर श्रीराधारानीके बायें हाथकी हथेलीपर आकर बैठ जाता है। राधारानी अपने दाहिने हाथके कमलको सिंहासनपर रख देती हैं तथा उसी हाथसे तोतेके सिर एवं पीठको सहलाती हुई कहती हैं—तोता! तूने मेरे प्यारे श्यामसुन्दरकी बातें सुनायी है, तुम्हें क्या दूँ?

तोता अपने पंख फुलाता है तथा श्रीराधारानीके कर-स्पर्शको पाकर प्रेममें डूब जाता है। कभी आँखें बंद करता है, कभी खोलता है। इसी समय वृन्दादेवी, जो श्रीराधाके पश्चिमकी ओर खड़ी थीं, घूमकर श्रीराधाके दाहिनी ओर आ जाती हैं तथा कहती हैं—तोता! एक बार फिर उड़कर जा और देख कि श्यामसुन्दरके आनेमें इतना विलम्ब क्यों हो रहा है?

तोता यह सुनते ही फुर्रसे उड़कर आकाशमें पहले तो पूर्वकी ओर जाता है, फिर उत्तरकी ओर उड़ता हुआ राधाकुण्डको पार करके, तदुपरान्त विशाखा-कुञ्जको भी पार करके दृष्टिसे ओझल हो जाता है। जबतक तोता

दिखलायी देता है, तबतक राधारानी उधर ही देखती रहती हैं। जब तोतेका दीखना बंद हो जाता है, तब उसी सिंहासनका सहारा लेकर, उसपर पीठका भार देकर वे बायें हाथसे अपने कपोलोंको पकड़कर बैठ जाती हैं। दृष्टि फिर भी उसी ओर लगी हुई है कि जिस ओरसे श्यामसुन्दरके आनेकी सम्भावना है। ललिता, जो श्रीराधाके पीछे खड़ी रहकर कुछ सोच रही थीं, वे उत्तरकी ओर जाती हैं तथा चहारदीवारीके पास पहुँचकर, उसके ऊपर हाथ रखकर उत्तरकी ओर देखने लगती हैं। रूपमञ्जरी, जो रूमालसे तलवेको सहला रही थी, एकटक रानीके मुखकी ओर देख रही है।

अब वृन्दा पिंजरेका द्वार खोल देती हैं। उसमेंसे सारी निकलकर राधारानीके बायें पैरके पास आकर मखमली चादरपर खड़ी हो जाती है एवं श्रीराधारानीके पैरका अपनी चोंचसे स्पर्श करती है। श्रीराधारानी श्रीकृष्णके ध्यानमें इतनी तल्लीन हैं कि उन्हें यह सर्वथा पता नहीं चलता कि सारी मेरे पैरोंको छू रही है। पर विशाखाने थोड़ा झुककर सारीको अपनी हथेलीपर रख लिया तथा दाहिने हाथसे उसके सिरपर हाथ रखकर उससे बोलीं—सारी! तू बड़ी चतुर है। यदि किसी प्रकार श्यामसुन्दरका समाचार ला सकेगी तो मैं तेरा बड़ा उपकार मानूँगी। तू जब जाती है तो काम बना करके ही आती है। इसीलिये आज भी मैं तुझसे प्रार्थना करती हूँ कि ठीक-ठीक समाचार ला दे कि आज श्यामसुन्दरको देरी क्यों हो रही है?

सारी तत्क्षण बोल उठती है—अभी-अभी समाचार लाती हूँ। बस, एक घड़ीमें सारा भेद लेकर लौट आऊँगी।

सारी भी उड़कर उधर ही चली जाती है, जिधर तोता उड़कर गया था। विशाखा पंखा लेकर राधारानीको बयार करने लगती हैं; पर श्रीराधारानी रोक देती हैं तथा कहती हैं—रहने दो, अच्छा नहीं लग रहा है।

श्रीराधा उस सिंहासनपरसे उठकर नीचे मखमली चादरपर लेट जाती हैं। विमलामञ्जरी गुलाबपाशमें केवड़ेका अत्यन्त सुगन्धित जल लाती है तथा श्रीराधारानीके सिरको अपनी गोदमें लेकर बैठ जाती है।

श्रीराधारानी चित्त लेटी हुई हैं। उनका पैर पूर्वकी ओर है और सिर पश्चिमकी ओर विमलामञ्जरीकी गोदमें। विमलामञ्जरी दाहिने हाथमें गुलाबपाशको लेकर उसके अत्यन्त महीन छिद्रोंसे सुगन्धित जल श्रीराधाके मुख एवं शरीरपर धीरे-धीरे छींटती है तथा अपने बायें हाथसे ललारपर बिखरे हुए केशोंको ठीक कर रही है। कुछ देर बाद राधारानी उठ बैठती हैं तथा चहारदीवारीके पास खड़ी हुई ललितासे उत्सुकतापूर्वक पूछती हैं—ललिते! तोता आया क्या?

ललिता कहती हैं—नहीं।

श्रीराधारानी उठकर चहारदीवारीके पास जाती हैं तथा ललिताकी दाहिनी ओर खड़ी हो जाती हैं। कुछ देर खड़ी रहकर मुस्कुरा पड़ती हैं तथा कुछ लज्जामिश्रित मुद्रामें पूर्व एवं उत्तरके कोनेकी ओर हाथसे संकेत करते हुए कहती हैं—ललिते! वह देखो! श्यामसुन्दर आ रहे हैं।

ललिता—कहाँ आ रहे हैं?

श्रीराधा कुछ झल्लाये हुए स्वरमें कहती हैं—अन्धी हो गयी हो क्या? क्या देखती नहीं, वे वहाँ खड़े हैं?

अब ललिता समझ जाती हैं कि श्रीराधाको भ्रम हो रहा है। प्रेमके आवेशमें राधाकी दृष्टि स्पष्ट नहीं देख रही है। ललिता मुस्कुराकर चुप रह जाती हैं। श्रीराधा फिर वहाँसे हटकर, जहाँ पहले लेटी हुई थीं, वहीं जाकर लेट जाती हैं। फिर कुछ उतावलेपनकी मुद्रामें उठकर वहीं ललिताके पास आ जाती हैं तथा कहती हैं—ललिते! मेरा सिर घूम रहा है। मुझे भ्रम हो गया था, वहाँ श्यामसुन्दर नहीं थे।

फिर थोड़ी देर खड़ी रहकर श्रीप्रिया प्रसन्न स्वरमें कहती हैं—वह देखो, वे आ रहे हैं।

ललिता इस बार भी मुस्कुराकर चुप रह जाती हैं। राधा कुछ चिढ़ी-सी होकर वहीं चहारदीवारीके सहारे पीठ टेककर खड़ी हो जाती हैं। कुछ देर बाद फिर उधर ही देखने लगती हैं। श्रीराधाका मुख-मण्डल कुछ लाल होता जा रहा है। शरीर भी कुछ काँप-सा रहा है। ललिता

रूपमञ्जरीको कुछ संकेत करती हैं। रूपमञ्जरी श्रीराधाके हाथोंको पकड़कर वहाँ सिंहासनके पास ले जाती है। राधा जाते ही धड़ामसे वहाँ गिर पड़ती हैं, पर लवङ्गमञ्जरी उन्हें सँभाल लेती है। वह अपनी गोदमें सिर रखकर पासमें ही रखे हुए गुलाबपाशसे केवड़ेका सुगन्धित जल लेकर राधाके मुखपर छींटा देने लगती है। विशाखा मधुमतीमञ्जरीको कुछ संकेत करती हैं। मधुमती वीणाके तारको एक-दो बार ऐंठकर तुरंत ही ठीक कर लेती है तथा अत्यन्त मधुर स्वरमें गाने लगती है—

मो मन गिरिधर छबि पै अटक्यौ।
ललित त्रिभंगी चाल पै चलि कै चिबुक चारु गड़ि ठटक्यौ॥
सजल स्याम घन बरन लीन ह्वै फिर कहुँ अनत न भटक्यौ।
कृष्णदास किये प्रान निछावर यह तन जग सिर पटक्यौ॥

गीत सुनते ही श्रीराधाका सारा शरीर काँपने लग गया। वे पहले तो लेटी हुई कुछ बड़बड़ाने लगीं, फिर उठ बैठीं और उठकर इधर-उधर देखने लगीं। फिर बहुत शीघ्रतासे उठकर वहाँ गयीं, जहाँ ललिता खड़ी थीं। ललिताके पाससे फिर दौड़कर सिंहासनके पास आ गयीं। सिंहासनपर पैर फैलाकर बैठ गयीं तथा मुस्कुराने लगीं। फिर उठकर खड़ी हो गयीं तथा जिस प्रकार श्रीकृष्ण ग्रीवा टेढ़ी करके बोलते हैं, उसी प्रकार ग्रीवाको कुछ तिरछी करके बोलती हैं—री ललिते! सुन।

ललिता अब एकटक श्रीराधाकी ओर ही देख रही हैं। ललिता जब नहीं आयीं, तब श्रीराधारानी स्वयं उठकर उसके पास जाकर खड़ी हो गयीं तथा अत्यन्त विनयके स्वरमें बोलीं—ललिते! बता दे, राधा कहाँ छिपी है? अभी तो यहीं थी, कहाँ चली गयी?

राधा इस प्रकार ललिताके पैरोंपर गिरकर प्रार्थना कर रही थीं कि उसी समय श्यामसुन्दर आ पहुँचते हैं तथा राधारानीकी प्रेम-दशाको मुग्ध होकर खड़े-खड़े देखने लग जाते हैं।

सारी एवं तोता भी चहारदीवारीके ऊपर जा बैठते हैं। श्रीराधा सर्वथा व्याकुल-सी होकर बार-बार ललितासे कहती हैं—ललिते! मेरी प्यारी ललिते!! क्या नहीं बतायेगी कि राधा कहाँ छिपी है?

ललिता एवं सखियाँ तो चकित होकर श्रीराधारानीकी यह प्रेम-लीला देख रही हैं। ललिता आँखोंके संकेतद्वारा श्रीकृष्णको, जो राधाके पूर्व एवं दक्षिणके कोनेपर कुछ दूरपर खड़े हैं, कह रही है—देखो, यहाँ कैसी लीला हो रही है ?

श्रीराधा फिर वहाँसे उठकर इधर-उधर घूमने लग जाती हैं। श्रीराधाका मुँह जब श्रीकृष्णकी ओर होता है तो श्रीकृष्ण पासकी एक छोटी-सी झाड़ीमें छिप जाते हैं तथा राधा सर्वथा पगली-सी होकर कभी पूर्व, कभी उत्तर एवं कभी दक्षिणकी ओर मुँह करके देखती रहती हैं। श्रीकृष्ण संकेतसे ललिताको बुलाते हैं। ललिता श्रीकृष्णके पास जाती है। श्रीकृष्ण उसके कानमें कुछ कहते हैं। ललिता राधाके पास आती है तथा उन्हें पकड़कर कहती है—देखो, तुम्हें राधाके मिलनेका उपाय बता देती हूँ। तुम वंशीमें तान भरो, फिर राधा तो पगली होकर दौड़ी आयेगी।

राधारानी बड़ी प्रसन्नतासे अपनी कमरपर हाथ रखकर ऐसी मुद्रा बनाती हैं कि मानो वंशी खोज रही हों। ठीक इसी समय श्रीकृष्ण पीछेसे आकर श्रीराधाके होठोंपर अपनी वंशी रख देते हैं। श्रीराधा उसमें सुर भरने लगती हैं; पर श्यामसुन्दरका स्पर्श जैसे-जैसे होता जाता है, वैसे-वैसे वे कुछ मूर्च्छित-सी होती जाती हैं। श्यामसुन्दर मुस्कराते हुए श्रीराधाको धीरेसे बैठा देते हैं। श्रीराधा यन्त्रकी तरह बैठ जाती हैं, पर अधिक देरतक बैठे रहना सम्भव नहीं। मूर्च्छित होकर वे श्रीकृष्णकी गोदमें गिर पड़ती हैं। श्रीकृष्ण गुलाबपाश लेकर अपने दाहिने हाथसे श्रीराधाके मुखपर छींटा देने लगते हैं। जब श्रीराधाकी मूर्च्छा नहीं टूटती, तब श्रीकृष्ण बायें हाथसे वंशी बजाते हैं तथा उसी स्वरमें मधुमती गाती है—

> श्याम दृगन की चोट बुरी री।
> ज्यों ज्यों लेत नाम तू वाको मी घायल पै नौन पुरी री॥
> ना मानों अब सुध बुध मेरी कौन विपिन में जाय दुरी री।
> नारायन नहिं छुटत सजनी ताको जासों प्रीति जुरी री॥

गीत सुनते ही श्रीराधाको चेत होने लगता है। वे आँखें खोल देती हैं तथा देखती हैं कि उनका सिर श्यामसुन्दरकी गोदमें है एवं श्यामसुन्दर मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं। श्रीराधा सकुचायी-सी होकर सखियोंकी ओर

देखती हैं। अब उन्हें ज्ञान होता है कि मैं तो चहारदीवारीके पास खड़ी थी, फिर यहाँ कैसे आ गयी? यही सोचती हुई घबरायी-सी होकर वे उठ बैठती हैं। सखियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ती हैं। श्यामसुन्दर हँसते हुए कहते हैं—क्यों, श्रीराधारानी मिली कि नहीं?

अब राधारानी समझ जाती हैं कि वे बाह्यज्ञानशून्य होकर कुछ-का-कुछ बकती रही हैं, इसलिये और भी सकुचा-सी जाती हैं; पर साथ ही आनन्दके कारण मुखपर मुस्कराहट आ जाती है। श्यामसुन्दर उन्हें हाथ पकड़कर उठाते हैं तथा राधारानी उठकर श्यामसुन्दरके कंधोंको पकड़कर मन्द-मन्द गतिसे चलती हुई सिंहासनके पास पहुँच जाती हैं। श्रीकृष्ण एवं राधारानी, दोनों सिंहासनपर उत्तरकी ओर मुँह करके बैठ जाते हैं। दो सखियाँ पंखा झलने लगती हैं तथा कुछ सखियाँ शर्बत तैयार करने लग जाती हैं।

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

विनोद लीला

निकुञ्जमें सुन्दर-सुन्दर फूलोंकी क्यारियाँ लगी हुई हैं। श्रीकृष्ण एवं श्रीराधा दोनों हाथोंमें फूल तोड़कर डलियामें रखते जा रहे हैं। वे उजले-उजले बड़े-बड़े बेलके फूलोंको तोड़ते हैं तथा डलियामें सजा-सजा करके रख देते हैं। भौंरोंका समूह गुन-गुन करता हुआ इस फूलसे उस फूलपर उड़ रहा है। श्रीकृष्णके कपोलपर एक भौंरा बैठना चाहता है। श्रीकृष्ण उसे उड़ाना चाहते हैं, श्रीप्रिया मन्द-मन्द मुस्कराती हुई सहायता करती हैं, दोनों हँसते हैं। इसी समय श्यामसुन्दरका प्यारा सखा मधुमङ्गल वहाँ आ जाता है। मधुमङ्गल बार-बार मुँह फुलाकर फुन-फुन करता हुआ सखियोंके बीचमें आकर खड़ा हो जाता है। ललिता धीरेसे पीछेसे आकर उसका कंधा हिलाकर पूछती है—क्यों बाबाजी! आज पेट भरा है कि खाली है?

मधुमङ्गल—डाइन कहींकी! कल तूने मुझे लीची खिला दी थी। अभीतक मेरा पेट दुख रहा है।

श्रीकृष्ण एवं राधा खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं। श्रीकृष्णकी ओर देखकर मधुमङ्गल कहता है—अरे! तुम्हें तो हँसी आती है और मैं रातभर सो नहीं सका।

श्रीकृष्ण—भैया! मैं तो इसलिये हँस दिया कि तू सीधे यह क्यों नहीं कह देता कि हे ललिते, मुझे पपीता ला दे। बेचारीको झूठमूठ 'डाइन' कह दिया।

मधुमङ्गल—नहीं जी! मैं इसके हाथकी अब कोई भी वस्तु नहीं खा सकता।

इसी समय विशाखा आती है तथा कहती है—भैया मधुमङ्गल!

तू मेरा एक काम कर दे तो फिर मैं तुम्हें पेटभर आम खिलाऊँगी। मेरे निकुञ्जमें इतने बढ़िया-बढ़िया आम पके हैं कि तेरे मुँहमें देखते ही पानी आ जायेगा।

श्रीकृष्ण—अरे भैया! धोखेमें मत आना। यह विशाखा बड़ी चतुर है। पहले काम करा लेगी, फिर आम नहीं देगी।

मधुमङ्गल—हूँ; मैं तेरी तरह भोला थोड़े ही हूँ! आम पहले खाऊँगा, तब फिर कामकी बात।

विशाखा—नहीं, नहीं, पहले आम दूँगी। तू खा ले, फिर काम करना।

श्रीकृष्ण—मधुमङ्गल! देख, यह तुझे वास्तवमें यहाँसे हटाना चाहती है। तू लोभमें कहीं आ गया तो फिर मैं अकेला रह जाऊँगा और ये सब मुझे तंग करेंगी।

मधुमङ्गल—विशाखे! देख, मैं-तू एक ही गुरुके चेले हैं। तू मेरे कान्हूँसे मुझे यदि हटाना चाहेगी तो सावधान रहना। पाँच दिनतक लगातार तुम्हें ऐसा पाठ पढ़ाऊँगा कि जीवनभर याद रखेगी।

पासमें पड़े हुए कुछ जामुन मधुमङ्गलके हाथमें रखकर श्रीराधा कहती हैं—पहले तू इन्हें खा ले। फिर सचमुच एक काम तुमसे कराना है। तू कर देगा तो मैं तुम्हारे पिताके लिये दो सुन्दर हीरे दूँगी।

मधुमङ्गलसे श्रीकृष्ण आँखोंसे कुछ संकेत करके कहते हैं। मधुमङ्गल भी आँखोंसे ही उत्तर देता है। ललिता इसी बीच एक हलकी-सी चपत मधुमङ्गलको लगा देती हैं तथा कहती हैं—यों बात करनेसे बच्चू! छूटोगे नहीं! या तो सीधे मनसे हमलोग जो कहें, वह कर दो, नहीं तो मैं इस कुञ्जसे अभी-अभी बाहर निकाल दूँगी।

चपत लगनेपर मधुमङ्गल दोनों हाथोंसे अपना गाल पकड़ लेता है तथा विचित्र स्वरमें कहता है—बाप रे! ललिता तो महाकाली दुर्गा हो गयी है। अरे! मेरी बलि लेगी क्या? नहीं, नहीं, ऐसा मत करना। मैं अपने बापका एक ही बेटा हूँ।

सभी मधुमङ्गलकी बात सुनकर हँसने लगते हैं तथा विशाखा ललितापर कुछ गरम होकर कहती है—ललिते! सचमुच तू व्यर्थमें

मधुमङ्गलको तंग कर रही है। देख! यह बेचारा कितना भला है! उस दिन यह नहीं होता तो तू ही बता, हमलोगोंको श्रीकृष्णसे हारकर न जाने उनकी क्या-क्या चाटुकारिता करनी पड़ती?

विशाखा यह कहकर मधुमङ्गलका मुँह अपने रूमालसे पोंछती हैं। मधुमङ्गल श्रीकृष्णकी ओर देखकर संकेतसे कुछ कहना चाहता है, पर ललिता इस प्रकार बीचमें आकर खड़ी हो जाती हैं कि श्रीकृष्ण आड़में पड़ जाते हैं।

मधुमङ्गल—अजी देवीजी! आपने चपत भी लगा दी और अब फिर नयी छेड़खानी कर रही हैं तो फिर देवी-देवाका युद्ध होगा, भला! आप मेरी बात समझ रही हैं न!

ललिता मुस्कुराती हैं। मधुमङ्गल चाहता है कि किसी प्रकार यह सामनेसे हट जायें तो श्रीकृष्णको अपने मनकी बात संकेतसे ही समझा दूँ; पर मधुमङ्गल जिधर मुँह फेरता है, ललिता जान-बूझकर उसी ओर बढ़ जाती हैं और श्रीकृष्ण उसकी आड़में हो जाते हैं। मधुमङ्गल नयी चतुराई करता है। वह अपना कुर्ता फाड़ लेता है तथा कहता है—बाप रे! ललिता हमें फाड़कर खा जायेगी! कान्हूँ! देखो, सँभालो!

श्रीकृष्ण हँसते हुए ललिताके पीछे आकर खड़े हो जाते हैं तथा ललिताके कंधेपर हाथ रखकर कुछ ऐसी मुख-मुद्रा बनाते हैं मानो मधुमङ्गलसे कह रहे हों कि अभी थोड़ी देर चुप रह, हल्ला मत कर, नहीं तो खेल बिगड़ जायेगा। मधुमङ्गल संकेतको समझ जाता है तथा ललिताके आगे हाथ जोड़कर गालोंको फुलाकर एक श्लोक पढ़ता है। श्लोकका भाव यह है कि हे देवि! आप चण्डी हो, मेरी बलि मत लेना, नहीं तो मेरे बाप मेरे लिये बहुत रोयेंगे और चिढ़कर फिर तुम्हारी पूजा बंद कर देंगे। मधुमङ्गल इस श्लोकके द्वारा श्रीकृष्णको अपने मनकी बात संकेतमें समझा देता है तथा श्रीकृष्ण भी समझकर हँसने लगते हैं।

इतनेमें ही विशाखाकी एक मञ्जरी परातमें बहुत बड़े-बड़े अत्यन्त मधुर आम भरकर लाती है। मधुमङ्गलकी दृष्टि आमोंपर चली जाती है। वह कोख बजा-बजाकर नाचता एवं कहता है—अरे! क्या ही मीठे आम हैं! विशाखे! यदि तुमने ऐसे मीठे आम मुझे आज खिलाये तो सच मान

कि मैं तुम्हें हृदयसे आशीर्वाद दूँगा। देख ! मैं ब्राह्मणका लड़का हूँ, मेरा आशीर्वाद कभी झूठा नहीं होता। मेरे आशीर्वादसे तेरे मुँहमें निरन्तर आमकी सुगन्धि आने लगेगी। फिर आम खानेपर तेरा जी नहीं चलेगा।

मधुमङ्गलके बोलनेके ढंगसे तथा बीच-बीचमें मुँह बनानेके कारण सभी हँस पड़ते हैं। राधारानी भी इस बार खुलकर हँसने लगती हैं तथा अत्यन्त मधुर स्वरमें कहती हैं—आ ! मैं तुझे आम खिलाती हूँ।

वे मधुमङ्गलके पास आकर खड़ी हो जाती हैं। हाथ पकड़कर श्रीकृष्णको झकझोरता हुआ मधुमङ्गल बैठ जाता है। श्रीकृष्ण भी उसके साथ ही बैठ जाते हैं। चित्रा एक सुन्दर छुरी लाती हैं तथा आमोंको शीतल जलसे धोकर एवं छीलकर उनकी फाँक (टुकड़े) सोनेकी तश्तरीमें रखती जाती हैं। दो तश्तरियाँ भर जानेपर मधुमङ्गल कहता है—तुमलोगोंका परोसना तो शायद कलियुगके बीत जानेके बाद समाप्त होगा।

फिर मधुमङ्गल श्रीकृष्णसे कहता है—कान्हूँ ! ऐसा लगता है कि आम सचमुच बहुत मीठे हैं।

श्रीराधा मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई और मधुर चालसे चलती हुई दोनों तश्तरियोंको लाकर पहले मधुमङ्गलके सामने एवं फिर श्रीकृष्णके सामने एक-एक तश्तरी रख देती हैं। घनी दूबके कारण वहाँकी भूमि इतनी कोमल एवं हरी-हरी हो रही है मानो हरे मखमलका गद्दा बिछा हुआ हो। उसी दूबपर श्यामसुन्दर एवं मधुमङ्गल बैठे हुए आमका भोग लगाते हैं। श्यामसुन्दरका एक हाथ भूमिपर है, पैर फैले हुए हैं तथा वे दाहिने हाथसे आम खा रहे हैं। इन्दुलेखा दो गिलासोंमें शीतल एवं मधुर जल भरकर लाती हैं तथा उनकी तश्तरियोंके पास रख देती हैं। मधुमङ्गल कभी तो पालथी मारकर बैठता है और कभी श्यामसुन्दरके समान ही पैर फैलाकर एक हाथ भूमिपर रखकर आम खाता है। श्यामसुन्दर शान्त मुद्रासे ही आम खाते हैं। उनकी दृष्टि श्रीप्रियाके मुखकी ओर ही प्रायः लगी है। इसी बीचमें मधुमङ्गलने दो बार कहा—क्यों कान्हूँ ! आम मीठा है न ?

श्रीकृष्णकी दृष्टि श्रीराधाकी शोभा निहारती हुई उसीमें इतनी तल्लीन-सी हो गयी थी कि उन्होंने मधुमङ्गलकी बात सुनी ही नहीं। इसी

बीच मधुमङ्गल अपनी तश्तरीको उठाकर श्यामसुन्दरके सामने रख देता है तथा उनकी तश्तरी लेकर कहता है—कान्हूँ ! मेरी बात सुनो। देखो, अब तुम खाओगे तो पाप लगेगा; क्योंकि तुम ब्राह्मण तो हो नहीं ! मैं खा सकता हूँ, पर तुम्हें अब तबतक नहीं खाना चाहिये, जबतक ये सब कुछ प्रसाद न पा लें।

इसके बाद श्यामसुन्दरकी जो तश्तरी उसने उठायी थी, उसमेंसे आमकी एक फाँक लेकर मधुमङ्गल ललितासे कहता है—देवीजी ! पहले आप भोग लगायें, तब आपकी ये दासियाँ भोग लगायेंगी।

अब मधुमङ्गल ठीक ऐसे ढंगसे आमकी उस फाँकको फेंकता है कि वह टुकड़ा ललिताके ठीक होठोंपर जाकर लगता है। अब श्रीकृष्णको कुछ चेत हुआ तो देखते हैं कि मेरी तश्तरीमें तो आम है ही नहीं, उन्होंने तो दो-एक टुकड़े ही खाये थे। उन्होंने सोचा कि मधुमङ्गल खा गया होगा और फिर बोले—मधुमङ्गल ! मैं तो भूखा ही रह गया और तुम तो मेरा भाग भी चट कर गये !

मधुमङ्गल उठता है तथा आमका वही टुकड़ा, जो ललिताके होठोंसे लग करके भूमिपर गिर पड़ा था, लाकर श्रीकृष्णको देता है—लो ! भूखे हो तो देवीका प्रसाद पाओ !

श्रीकृष्ण बड़े ही प्रेमसे आमके उस टुकड़ेको खा जाते हैं तथा ललिता कुछ आँखें तरेरकर मधुमङ्गलपर खीझती हुई कहती है—मधुमङ्गल ! तू बड़ा पाजी हो गया है।

मधुमङ्गल मानो डर गया हो, ऐसी मुद्रा बनाकर आँखें फाड़कर कहता है—देवीजी ! मुझसे भूल हो गयी, बहुत बड़ी भूल हो गयी। आपकी बड़ी बहिनको भोग लगाये बिना आपको भोग लगा दिया। क्षमा ! क्षमा !! त्राहि देवि ! त्राहि ……… ।

इतना कहकर मधुमङ्गल तुरंत एक टुकड़ा ऐसी कुशलतासे फेंकता है कि वह राधारानीके होठोंपर जा लगता है तथा होठोंसे लगकर भूमिपर गिर जाता है। गिरते ही राधारानी बड़ी प्रसन्न होती हैं कि मधुमङ्गलने मुझे श्रीकृष्णका प्रसाद दिया है। वह उसे उठानेके लिये नीचे झुकती हैं, पर उनके उठानेके पहले ही मधुमङ्गल दौड़कर उसे उठा लेता है तथा लाकर

श्रीकृष्णके मुखमें दे देता है एवं कहता है—यह लो! देवीजीकी बड़ी बहिनका प्रसाद है। अब तुम अमर हो गये। तुम्हें भूत कभी नहीं लगेगा। खा लो!

यह देखकर ललिता दौड़कर आती हैं तथा मधुमङ्गलका हाथ पकड़कर उससे बलपूर्वक तश्तरी छीन लेती हैं। मधुमङ्गल कहता है—ठीक है। आज देवी बड़ी प्रसन्न हैं। अपने हाथसे ही अपनी बहिनको खिलायेंगी।

श्रीकृष्ण मुस्कुराते हुए होठोंसे गिलास लगाकर धीरे-धीरे घूँट भरकर जल पीते हैं; पर उनकी दृष्टि श्रीराधाके मुख-चन्द्रकी ओर ही लगी है! श्रीराधा पासमें ही खड़ी हैं। उनकी आँखोंमें प्रेमके आँसू भर आते हैं; पर मुस्कुराकर वे उन्हें रूमालसे शीघ्रतापूर्वक पोंछ लेती हैं कि कोई देख न ले।

रूपमञ्जरी हाथमें सोनेकी झारी लेकर पासमें ही खड़ी है। वह श्रीकृष्णके हाथ धुलाती है। अनङ्गमञ्जरी पीले रंगके रेशमी रूमालसे श्रीकृष्णके हाथ पोंछ देती है। मधुमङ्गल दूबमें अपना हाथ रगड़ने लगता है। श्रीकृष्ण हँसकर रूपमञ्जरीको संकेत करते हैं--तू भूल गयी। पहले इसका हाथ धुला देना चाहिये था।

रूपमञ्जरी हँसती हुई कहती है—बाबाजी! हाथ धो लें।

मधुमङ्गल हाथ धो लेता है। फिर जिस रूमालसे श्रीकृष्ण हाथ पोंछ रहे थे, उसीको तुरंत छीन लेता है तथा अपने हाथ पोंछने लगता है। पासमें ही श्रीप्रिया खड़ी थीं। उनका रूमाल उसी समय संयोगसे प्रेमके आवेशमें गिर पड़ता है। उन्हें पता नहीं; पर मधुमङ्गलकी दृष्टि तो अत्यन्त तीक्ष्ण है। उसने चटसे उसे उठाया तथा हँसता हुआ श्रीकृष्णके हाथमें देकर कहता है—यह लो, देवीकी बड़ी बहिनने तुमपर प्रसन्न होकर रूमालका यह प्रसाद मेरे हाथों भेजा है।

श्रीकृष्ण रूमालको लेकर सिरसे लगा लेते हैं। अब प्रियाकी दृष्टि उधर जाती है। उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि क्या हुआ; पर जब देखा कि मेरा रूमाल तो श्रीकृष्णके हाथोंमें है तो कुछ लज्जित-सी हो गयीं और मधुमङ्गलकी ओर हँसती हुई देखने लगीं। श्रीकृष्णकी कटिमें उनका रूमाल खोंसा हुआ था। मधुमङ्गल उसे वहाँसे निकाल लेता है। उसे

हाथमें ले करके एवं पर्त लगा करके यह श्रीराधारानीके पास जाता है एवं कहता है—राधे ! यह लो, आज तुमपर वन-देवता बड़े प्रसन्न हैं; उन्होंने यह प्रसाद भेजा है ।

राधा कुछ लजायी-सी होकर रूमाल हाथमें ले लेती हैं । श्रीकृष्ण उठते हैं । वहाँसे कुछ दूर दक्षिणकी ओर चलते हैं । इसी बीचमें ललिता राधाके मुखमें प्रसाद दे देती हैं । श्रीराधारानी शीघ्रतासे अम खा जाती हैं ! रूपमञ्जरी गिलासके जलका प्रसाद होठोंसे लगा देती है । राधारानी दो घूँट भर लेती हैं । विशाखा अपने रूमालसे मुँह पोंछ देती है । यह काम उतनी देरमें ही हो जाता है कि जितनी देरमें श्रीकृष्ण मतवाली चालसे चलते हुए कदम्बकी जड़के पास पहुँचते हैं । श्रीकृष्ण कदम्बके पास जाकर उत्तरकी ओर मुँह करके दूबपर बैठ जाते हैं । श्रीराधा भी वहीं जाती हैं । गुणमञ्जरी पनबट्टा हाथमें लिये हुए पीछे-पीछे जाती है । इधर सभी सखियाँ भी शीघ्रतासे प्रसाद लेती हैं तथा हाथ धोकर एक-एक करके कदम्बके पास पहुँच जाती हैं । श्रीराधा सबसे पहले पहुँचती हैं तथा पनबट्टा खोलकर पान निकालती हैं एवं सबसे पहले मधुमङ्गलको देती हैं ।

मधुमङ्गल—क्यों न हो ! देवीकी बड़ी बहिन कभी भूल नहीं सकती ।

श्रीकृष्ण मुस्कुराते हैं । रानी मुस्कुराती हुई पान मधुमङ्गलके होठोंसे लगा देती हैं । मधुमङ्गल खा लेता है । राधा दूसरा बीड़ा पनबट्टेसे लेती हैं तथा अत्यन्त प्रेमसे श्रीकृष्णके होठोंसे लगाती हैं । श्रीकृष्ण बड़े ही प्रेमसे पानको धीरे-धीरे मुँहमें ले लेते हैं । अब मधुमङ्गल सोचता है कि किसी प्रकार यह पान श्रीकृष्ण उगल दें तो उठाकर इन सबको दे दूँ । उसे युक्ति सूझ जाती है । वह पीकदानी उठाकर सामने रख देता है तथा अत्यधिक विचलित स्वरमें कहता है—कान्हूँ ! कान्हूँ भैया !! थूक दे, तुरंत पानको थूक दे; देर मत कर; अरे ! देर क्यों कर रहा है ?

श्रीकृष्ण हँसकर पूछते हैं—क्यों, क्या बात है ?

मधुमङ्गल—अरे भैया ! यह ललिता तो मुझे सचमुच न-जाने मार डालेगी क्या ? देखो, इसने पानमें चूना अधिक दे दिया है । मेरा मुँह कट गया है, तुम्हारा भी कट जायेगा । पानको थूक दो, अभी थूक दो ।

मधुमङ्गल पीकदानी उठाकर श्रीकृष्णके मुखके पास ले जाता है, पर श्रीकृष्ण हाथसे पीकदानीको थोड़ा हटाकर मुस्कुराते हुए कहते हैं - मधुमङ्गल! मेरा मुँह तो नहीं कटा, मैं क्यों थूकूँ?

मधुमङ्गल श्रीकृष्णका मुँह पकड़ लेता है तथा कुछ खीझकर कहता है—सुनता नहीं? मुँह कट जायेगा तो रोयेगा। अरे! थूक दे।

श्रीकृष्ण मुस्कुराते हुए पीकदानीमें पान थूक देते हैं। मधुमङ्गल पीकदानी उठाकर ललिताको पकड़ा देता है—लो देवीजी! विश्वास नहीं हो तो चखकर देख लो। फिर देखना, मुँह कैसा बन जाता है। इतना चूना देकर जैसे मेरा मुँह काट डाला, वैसे ही नहिं तुम खाओ, तब जानें कि सचमुच तुमने जान-बूझकर चूना अधिक नहीं डाला था।

ललिता बड़ी प्रसन्नतासे पीकदानीको उठा लेती है तथा पासमें खड़ी गुणमञ्जरीको पकड़ा देती है। गुणमञ्जरी उसे कुछ दूरपर ले जाकर घासपर रखती है। उसी समय वहाँ अनङ्गमञ्जरी एक दूसरा पनबट्टा ले आती है। वह उसमेंसे पान निकालकर और पनबट्टेके ढकनेपर रखकर पान लगाने लगती है। प्रत्येक बीड़ेमें श्रीश्यामसुन्दरके मुखारविन्दसे निकले हुए उस अमृतमय पीककी एक बूँद डलती है। गुणमञ्जरी बीड़े सजाती चली जाती है। कुछ बीड़े तैयार हो जानेपर अनङ्गमञ्जरी दो बीड़े उठाकर ललिताके हाथमें दे आती है। इधर यह काम हो रहा था, उधर मधुमङ्गल, वहाँ जो पनबट्टा पड़ा था, उसे उठाकर राधारानीके सामने रख देता है तथा कहता है—राधे! एक बढ़िया-सा पानका बीड़ा लगाकर पहले तू मुझे दे दे, फिर एक श्यामसुन्दरको दे दे। तुम्हें पान लगाना बहुत बढ़िया आता है। मैं तुम्हारे हाथका पान जिस दिन खाता हूँ, उस दिन मेरा मुँह कभी नहीं कटता तथा सारे दिन मुँहसे सुगन्धि आती रहती है। ले, तुरंत लगा दे।

राधारानी मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई पनबट्टेके ढकनेपर दो बीड़े लगाती हैं। बीड़े लगाकर उनपर सोनेके वरक चढ़ाती हैं। एक बीड़ा मधुमङ्गलके हाथमें देती हैं और दूसरा बीड़ा अतिशय प्यारभरी आँखोंसे श्यामसुन्दरकी ओर देखती हुई उनके होठोंसे लगा देती हैं। श्यामसुन्दर पान खाते जाते हैं तथा श्रीराधाके मुखकी शोभा देखते रहते हैं। श्रीराधा अपनी दृष्टि नीची किये बैठी हैं। इसी समय पश्चिमकी ओरसे मधुमती

वीणा लिये हुए आती है और राधारानीकी बायीं ओर बैठकर श्यामसुन्दरसे कहती है—श्यामसुन्दर ! आज तुम वंशी बजाओ और मैं वीणापर एक गीत गाती हूँ। सचमुच तुम गीत सुनकर बड़े प्रसन्न होओगे।

मधुमती वीणाको घासपर पूर्व-पश्चिमकी दिशामें रख देती है। वह बायें हाथसे वीणाकी खूँटियोंको ऐंठती जाती है तथा दाहिने हाथसे तारोंको झन-झन करती हुई स्वर ठीक करने लगती है। इतनेमें ही मधुमङ्गल उछल करके श्रीकृष्णकी बायीं ओर बैठ जाता है। श्रीकृष्ण उसके सहारे पीठ देकर एवं पैर पूर्वकी ओर फैलाकर बैठ जाते हैं तथा मधुमतीकी वीणाकी झनकारके साथ वंशीमें सुर भरते हुए सुर मिलाते हैं।

मधुमङ्गल कहता है—बाप रे बाप ! अरे कान्हूँ !! आज तुमने आम बहुत अधिक खाये हैं। आज तो तुम बहुत भारी हो गये हो।

यह सुनकर श्रीकृष्ण एक बार कनखीसे मधुमङ्गलको देखते हैं तथा धीरे-से कहते हैं—अच्छा ! तू इधर आकर बैठ जा।

मधुमङ्गल उठकर मधुमतीके सामने आकर बैठ जाता है। श्रीकृष्ण घासपर चित्त लेट जाते हैं। मधुमती जब-जब झन-झन करके तारोंके सुरको ठीक करती है, तभी-तभी श्यामसुन्दर उतनी देरके लिये उसी सुरमें सुर मिलाते हुए वंशीमें फूँक भर देते हैं। श्रीराधा अपने स्थानसे उठती हैं तथा श्रीकृष्णके सिरके पास आकर उत्तरकी ओर मुँह करके बैठ जाती हैं। इसी समय ललिता श्रीकृष्णके मुखको तनिक अपने अञ्चलकी ओटमें करके धीरेसे पानके प्रसादवाले वे दो बीड़े मुखमें दे देती है; पर श्यामसुन्दर तो देख लेते हैं और मुस्कुरा देते हैं। राधारानी भी मुँहमें पान लेकर मन्द-मन्द मुस्कुराने लगती हैं। मधुमतीकी वीणाके तार प्रायः ठीक हो चले हैं; पर श्यामसुन्दर कुछ ऐसी मुद्रा बनाते हैं मानो सिरके नीचे कुछ ऊँचा सहारा रहे तो उन्हें वंशी बजानेमें सुविधा हो। राधारानी पासमें ही बैठी हैं। वे श्यामसुन्दरको इस प्रकार करते देखकर ललिताको बड़ा मसनद लानेका संकेत करती हैं। इसी समय मधुमती वीणाको उठाकर कंधेपर रख लेती है। अब देर नहीं थी। श्रीकृष्णको सिर नीचा किये हुए बजानेमें कुछ असुविधा हो रही थी, इसीलिये उन्होंने अब विशेष देरी न देखकर वे कुछ पश्चिमकी ओर लेटे-लेटे ही सरक गये तथा श्रीराधारानीकी

गोदमें अपना सिर रखकर बोले—बस, मसनदकी कोई आवश्यकता नहीं है; मधुमती ! आरम्भ करो।

श्रीराधारानी बायें हाथसे श्यामसुन्दरके सिरको आवश्यकताभर ऊँचा करके अपनी गोदमें रख लेती हैं, जिससे श्यामसुन्दरको वंशी बजानेमें पूर्ण सुविधा हो जाती है तथा वे दाहिने हाथकी अँगुलियोंसे श्यामसुन्दरके लिलारको सहलाने लगती हैं। लिलारपर बिखरे हुए बालोंको ठीक कर देती हैं। अब एक साथ ही तालसे वीणा एवं वंशी बजने लगती है तथा मधुमती अत्यन्त मधुर स्वरमें गाने लगती है—

> बलि बलि बलि बलि कुँवरि राधिके नंद सुवन जासों रति मानी।
> तू अति चतुर वे चतुर सिरोमनि प्रीति करी कैसे रहत है छानी॥
> वे जो धरत तन कनक पीत पट सो तो सब तेरी गति ठानी।
> ते पुनि स्याम सहज सोभा वह अंबर मिस अपने उर आनी॥
> पुलक रोम अबहीं ह्वै आयो निरख देह निज रूप सयानी।
> सूर सुजान सखी के बूझे प्रेम प्रगट भयो वे हरषानी॥

(पदका भाव यह है—कुँवरि राधिके ! तुम्हारे ऊपर हम सब बलिहारी जाती हैं। जो श्रीकृष्ण सारे जगत्‌में, समस्त विश्व-ब्रह्माण्डमें आनन्दका संचार करते हैं, जिनसे सबको आनन्द मिलता है, जिनके एक कणके आनन्दसे समस्त ब्रह्माण्डमें आनन्दका विस्तार होता है, उन्हीं श्रीकृष्णको तुमसे आनन्द मिलता है। यह कितने आश्चर्यकी बात है, सबको आनन्द देनेवाला भी आनन्द पानेके लिये तुम्हारे पास आया है और उसे तुमसे आनन्द मिलता है। बलिहार हैं हम सब तुमपर ! राधे ! तू जैसे अतिशय चतुर है, वैसे ही वे भी चतुर-शिरोमणि हैं। चतुरसे चतुरकी प्रीति हुई है; पर प्रेम ऐसी वस्तु है कि वह छिप सकती ही नहीं। राधे ! धन्य है तुम्हारे दोनोंके प्रेमको। श्यामसुन्दर तुम्हें इतना प्यार करते हैं कि उन्होंने कनकवर्णीय पीताम्बर ही धारण कर लिया निरन्तर तुम्हारे कनक-कान्तियुक्त गौर मुखारविन्दकी स्मृति होते रहनेके लिये। तू भी तो नीली साड़ी इसीलिये पहनती है कि श्यामसुन्दरका श्याम-सौन्दर्य तुम्हारे हृदयमें निरन्तर बसा ही रहे। राधे ! देख, अभी इसी समय तुम्हारे प्रत्येक अङ्गसे प्रेमके चिह्न प्रकट हो रहे हैं। तुम्हारा

शरीर पुलकित हो गया है। तू ही देख ले कि तुम्हारी देहकी कैसी दशा हो रही है ? तुम्हारा रंग-रूप कैसा हो गया है ? सूरदास कहते हैं कि सखियोंके इस प्रकार कहते ही राधारानीके अङ्गोंमें प्रेमके विकार प्रकट हो गये तथा सारी सखियाँ आनन्दमें डूब गयीं।)

मधुमतीके गाते-गाते वहाँ सभी प्रेममें डूबने लग गये, चारों ओर निस्तब्धता छा गयी। गीत समाप्त होनेपर श्यामसुन्दरने अपनी आँखें मूँद लीं, वंशी वक्षःस्थलपर गिर गयी तथा राधारानीकी भी आँखें बंद हो गयीं। प्रेमके कारण सभीका धैर्य छूट रहा था। बड़ी कठिनाईसे रूपमञ्जरीने अपनेको थोड़ा सँभाला तथा जो मसनद थोड़ी देर पहले श्रीकृष्णके लिये लाया गया था, उसे उठाकर उसने श्रीराधाकी पीठके पास रख दिया। श्रीराधा आँखें बंद किये हुए उस मसनदका सहारा लेकर बैठी रहीं। सर्वत्र प्रेम एवं आनन्द छाया हुआ है। कुछ देर बाद श्रीकृष्ण उठकर बैठ जाते हैं। श्रीराधारानी उठकर खड़ी हो जाती हैं तथा ललितासे कुछ संकेत करती हैं। ललिता मधुमङ्गलसे कहती है—मधुमङ्गल! अब तो तूने आम खा लिये, अब मेरा काम कर दे।

मधुमङ्गल—हाँ-हाँ! अब एक नहीं, भले दो-तीन काम और करा लो।

ललिता पासमें ही एक शरीफेके पेड़के नीचे मधुमङ्गलको ले जाती है तथा धीरे-धीरे कुछ समझाती है। मधुमङ्गल 'बहुत ठीक', 'अच्छा', 'हाँ', 'तब'—इस प्रकार कहकर सिर हिलाता जाता है। श्रीकृष्ण दूरसे बैठे-बैठे यह देखते हुए मन्द-मन्द मुस्कुरा रहे हैं। राधारानी भी मन्द-मन्द मुस्कुरा रही हैं।

बात समाप्त होनेपर मधुमङ्गल उठता है तथा श्रीकृष्णसे कुछ आँखोंके संकेतमें कहता है। श्रीकृष्ण भी कुछ आँखोंके संकेतसे ही उत्तर देते हैं। इसके बाद मधुमङ्गल चल पड़ता है यह कहते हुए—अब शैब्याके कुञ्जमें अमरूद खाने जाता हूँ।

चलते-चलते मधुमङ्गल श्रीराधासे कहता है—देख! तूने मुझे दो हीरे देनेकी बात कही है न! कल काम हो जानेपर हीरे तुमको देना है। प्यारी है न!

श्रीराधा मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई कहती हैं—हाँ, हाँ अवश्य दूँगी।

मधुमङ्गल अपने कंधेपर एक छोटी-सी लकड़ी, जिसे उसने वहाँपर आते ही रख दी थी, उठा लेता है तथा वहाँसे सीधे पूर्वकी ओर चलकर राधाकुण्डको दाहिने रखते हुए कुण्डकी सीमा पारकर फिर पूर्वकी ओर चला जाता है। श्रीकृष्ण, श्रीराधा एवं सखियाँ नौकापर राधाकुण्डमें विहार करनेके लिये कुण्डके सुन्दर तटकी ओर बढ़ती हैं। श्रीराधाका दाहिना हाथ श्रीकृष्णके कंधेपर है तथा बायें हाथमें उन्होंने डंठीसहित कमलका फूल ले रखा है। श्रीकृष्ण बायें हाथमें वंशी पकड़े हुए हैं तथा दाहिने हाथसे निकुञ्जकी लताओंको दिखा-दिखाकर उनकी शोभा निहारनेके लिये राधारानीको संकेत करते जा रहे हैं। कभी सीधे पूर्वकी ओर, कभी दक्षिणकी ओर, कभी उत्तरकी ओर मुड़ते हुए निकुञ्जकी शोभा देखते हुए आगे बढ़ रहे हैं। इस प्रकार घूमते हुए निकुञ्जके द्वारपर आ पहुँचते हैं। निकुञ्जकी चहारदीवारी संगमरमरकी बनी है। उसपर अत्यन्त सुन्दर-सुन्दर लताएँ फैली हुई हैं। लताओंमें पुष्प लगे हैं। प्रवेशद्वार भी लता एवं पुष्पोंसे सजा हुआ है। मेहराबके ऊपर झुण्ड-के-झुण्ड तोता, मैना पक्षी बैठे हुए हैं। जैसे ही श्रीकृष्ण एवं श्रीराधा द्वारपर पहुँचते हैं, वैसे ही मैनाओंका झुण्ड अत्यन्त मधुर स्वरमें गाने लगता है—

जय राधे जय राधे राधे जय राधे जय श्रीराधे।

फिर तोतोंका झुण्ड गाता है—

जय कृष्ण जय कृष्ण कृष्ण जय कृष्ण जय श्रीकृष्ण ॥

श्रीराधा विभिन्न प्रकारके मेवे लानेके लिये संकेत करती हैं। तुरंत ही लवङ्गमञ्जरी बहुत-सा मेवा लाती है। श्रीकृष्ण एवं श्रीराधा तोता-मैनाओंको बुला-बुलाकर उन्हें अपने हाथपर बैठाकर मेवा खिलाते हैं। द्वारसे बाहर निकलते ही मयूर एवं मयूरियोंका झुण्ड आता है। वह पंख फुला-फुलाकर तथा मनोरम शब्द करता हुआ श्रीराधा एवं श्रीकृष्णकी परिक्रमा करता है। विमलामञ्जरीके हाथमें मिठाईकी जो बहुत बड़ी परात है, उसमें-से मिठाई ले-लेकर मयूर एवं मयूरियोंकी चोंचोंमें देते हैं। इस प्रकार मयूरोंको खिलाते हुए आगे बढ़ते जाते हैं। इतनेमें ही उत्तरकी ओरसे जो पगडंडी राधाकुण्डपर आती है, उसी राहसे चौकड़ी भरते हुए हरिण

एवं हरिणियोंका एक झुण्ड आता है तथा श्रीकृष्णके अङ्गको छू-छूकर कभी कुण्डकी ओर चौकड़ी भरता है, कभी निकुञ्जकी ओर। उन हरिणोंको श्रीप्रिया-प्रियतम अपने हाथोंसे सहलाते हैं। गुणमञ्जरी एक डलियामें दूबकी बनी हुई छोटी-छोटी ढेरी लाती है। उसे हरिणोंके मुखमें देते हुए वे राधाकुण्डके तटपर पहुँच जाते हैं।

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

वंशी गोपन लीला

श्रीसुदेवीके कुञ्जमें अमरूदके वृक्षकी छायामें श्रीप्रिया बैठी हैं। चारों ओर अमरूदके वृक्षोंका ही वन है। प्रत्येक वृक्षपर बड़े-बड़े सुन्दर-सुन्दर अमरूदके फल लगे हुए हैं। श्रीप्रिया एक शाखासे पीठ टेके तथा पैर फैलाये पूर्वकी ओर मुख किये बैठी हैं। कोई भी बिछौना नहीं है। वे हरी-हरी दूबपर ही बैठी हैं। श्रीप्रियासे कुछ दूर उत्तरकी ओर अमरूदकी डाली पकड़े ललिता खड़ी हुई कुछ सोच रही हैं। श्रीप्रियाकी दाहिनी ओर सुन्दर-सुन्दर, बड़े-बड़े अमरूदके फल सुन्दर परातमें रखे हुए हैं। उसी परातको घेरकर कुछ मञ्जरियाँ बैठी हुई हैं। वे सुन्दर चमकती हुई छुरीसे अमरूदको खण्ड-खण्ड करके तश्तरियोंमें सजाती जा रही हैं।

जहाँ प्रिया बैठी हैं, उससे लगभग सात-आठ हाथ पूर्वकी ओर हटकर निर्मल जलकी नाली बह रही है। नाली डेढ़ हाथ चौड़ी है तथा संगमरमरके पत्थरसे उसके दोनों तट पटे हुए हैं। उसी नालीके पास विशाखा बैठी हुई हैं। वे बार-बार निर्मल जलको चुल्लूमें भरती हैं और फिर उसे पानीमें गिरा देती हैं।

रानी पुकार उठती हैं—विशाखे! क्या कर रही है? इधर आ।

रानीकी पुकार सुनते ही विशाखा उठकर उनके पास आ जाती हैं तथा अत्यन्त प्यारभरी वाणीमें कहती हैं—क्यों, बोल!

रानीने विशाखाको पुकार तो लिया, पर पुकारनेके बाद फिर किसी चिन्तनमें इतनी तल्लीन हो गयी कि उन्हें तनिक भी पता नहीं कि विशाखा मेरे पास आयी है। रानीकी आँखें खुली हुई हैं, पर वे भाव-समाधिमें निमग्न हैं। विशाखा अतिशय प्यारसे रानीकी ठोड़ीको स्पर्श करती हुई धीरेसे कहती है—बावली बहिन! प्यारे श्यामसुन्दरको

वंशी फिर तो तेरे लिये छिपाकर रखना बड़ा कठिन है। श्यामसुन्दर आते ही होंगे। तू इस प्रकार पत्थरकी मूर्ति बनी बैठी रही, तब तो फिर वे आते ही वंशी ढूँढ़ निकालेंगे।

विशाखाकी बात सुनकर रानी घबरायी-सी होकर अपनी कञ्चुकीमें हाथ डालकर देखती हैं। वहाँ वंशीको ठीक स्थानपर पाकर अतिशय उमङ्गसे पुन: उसे दोनों हाथोंसे दबा लेती हैं। रानी अपने हृदयको इतना कसकर दबाती हैं कि मानो वे वंशीको भीतर हृदयमें ही धँसा देना चाहती हों। विशाखा रानीकी यह चेष्टा देखकर खिलखिलाकर हँस पड़ती है। रानी कुछ चकित-सी दृष्टिसे संकेतके द्वारा ललितासे कुछ कहती हैं। ललिता संकेतमें ही उत्तर दे देती हैं। रानी विशाखासे कहती हैं – री! यह पद सुना।

रानीकी आज्ञा सुनकर विशाखा मधुमतीको संकेत करती हैं। मधुमती झाड़ीके पास रखी हुई वीणा उठा लाती है तथा विशाखाके हाथमें पकड़ा देती है। विशाखा उसे कंधेके सहारे टिकाकर उसमें स्वर मिलाकर अत्यन्त मधुर कण्ठसे गाती हैं—

बाँसुरी तू कवन गुमान भरी।
सोने की नाहीं रूपे की नाहीं नाहीं रतन जरी।
जात सिफत सब कोऊ जानैं मधुबन की लकरी॥
कहा री भयो जब हरि मुख लागी बाजत बिरह भरी।
सूर स्याम प्रभु अब का करिये अधरन लागत री॥

रानी आँखें मूँदे रहकर पद सुनती हैं। पद समाप्त होनेपर कञ्चुकीसे वंशी निकालकर देखती हैं। देखते ही आँखें भर आती हैं। फिर भर्राये स्वरमें कहती हैं—वंशिके! प्यारे श्यामसुन्दरके अधरोंका रस तू पी चुकी है। आह! उस अनुपम अधर-रससे मतवाली होकर अपने साथ ही तू मुझे भी नचाती रही है; पर बहिन! इस समय तू चुप क्यों है? एक बार मेरी प्रार्थना मानकर मेरे कहनेसे 'श्याम-श्याम'की तान भरकर इस वनको गुँजा दे। मेरे प्रियतम प्राणेश्वरके पास इस तानके पहुँचते ही वे मेरे निकट निश्चय-निश्चय आ जायँगे।

रानी उत्कण्ठाभरी दृष्टिसे देखती हैं कि वंशी बजती है या नहीं; पर वंशी बजती नहीं। रानी कुछ रुदनभरे स्वरमें कहती हैं—हाँ बहिन! मैं समझ गयी, प्यारे श्यामसुन्दरसे बिछुड़कर तू नितान्त मूर्च्छित-सी हो रही है! ठीक है, बहिन! प्रेम इसे ही कहते हैं। मैं अभागिनी तो अभी भी हँस-खेल रही हूँ। हाय! मेरा हृदय कितना नीरस है, कितना कठोर है!

भाव-विह्वल हो जानेसे रानी मुखको अञ्चलसे ढककर सिसक-सिसककर रोने लगती हैं। रानीको पुनः रोती देखकर सखियाँ चिन्तित होने लग जाती हैं। बात यह है कि अभी थोड़ी देर पहले श्यामसुन्दरकी प्रतीक्षामें रानीको सारिकाके द्वारा यह समाचार मिला कि श्यामसुन्दर तो आज सम्भवतः वन नहीं आवें; क्योंकि आज मैया ब्राह्मणोंको श्यामसुन्दरके हाथसे बहुत-सी गायें दान करानेके उद्योगमें लगी हुई हैं। मधुमङ्गल लड़-झगड़ रहा है, पर मैया अभी सुन नहीं रही हैं। इस समाचारको सुनते ही रानी मूर्च्छित हो गिर पड़ी थीं। सखियोंने बहुत उपचार किये, परंतु चेतना नहीं आयी। फिर दौड़कर रूपमञ्जरी श्यामसुन्दरके पास गयी तथा उनसे बोली—ललिताने कहलवाया है कि किसी उपायसे शीघ्र आ जाओ या कोई दूसरा उपाय रचो; नहीं तो मेरी प्यारी सखी राधाके जीवनकी आशा समाप्त होती चली जा रही है।

श्यामसुन्दर बड़ी दुविधामें पड़ गये। मैया मध्याह्नके पहले-पहले छोड़ना नहीं चाहती, अतः श्यामसुन्दरने धीरेसे वंशी लाकर रूपके हाथमें दे दी और बोले—इसे मेरी प्रियाके होठोंपर लगा देना। उसे चेतना आ जायेगी तथा चेत हो आनेपर कहना कि मैं आ ही रहा हूँ।

रूपमञ्जरी वंशी ले आयी तथा वही किया गया। श्रीप्रियाको चेत हो आया तथा श्यामसुन्दरके आनेका समाचार सुनकर वे प्रसन्न हो गयीं। रानीके प्रसन्न होते ही सखियोंमें यह विचार होने लग गया कि इस वंशीको ही छिपाकर रख लिया जाये। श्यामसुन्दर इसे बड़ा ही प्यार करते हैं। वे इसे वापस लेना चाहेंगे ही, अतः उस अवसरमें उनसे कुछ वचन भरवा लिया जाये। उनसे कहा जाये कि तुम इसे विभिन्न प्रकारसे बजाना जानते हो। कभी तो जिसका नाम लेते हो, वही सुनती है,

दूसरी सुनती ही नहीं। कभी तुम्हारे होठोंपर लगी रहकर यह बनमें ऐसी गूँजती है मानो तुम प्रत्येक वृक्ष, प्रत्येक लता, प्रत्येक पत्तेके भीतर बैठकर इसे बजा रहे हो। कभी ऐसा प्रतीत होता है कि हम प्रत्येकके हृदयमें बैठकर तुम भीतरसे ही हमारा नाम पुकार रहे हो। कभी ऐसा सुर भरते हो कि इधर उस ध्वनिके कानमें पड़ते ही हम सब तो पत्थरकी मूर्ति बन जाती हैं और उधर उस ध्वनिसे पत्थरकी शिलाएँ भी पिघल जाती हैं, पिघलकर उनके अन्तरालसे वंशी-ध्वनि गूँजने लगती है। कहाँतक कहें, अबतक हम सब इस वंशीकी तानके असंख्य रूप देखती रही हैं। इसलिये अधिक नहीं, केवल एक तान हम सबको सिखला दो। बस, केवल इतना सिखला दो, हम सबमेंसे किसी एकको ही सही, पर यह सिखला दो कि उसके द्वारा फूँक भरते ही तुम जहाँ कहीं भी रहो, वहीं मोहित होकर, आकर्षित होकर मेरी रानीके पास पहुँच जाओ। तब तुम्हें वंशी वापस मिलेगी। नहीं तो यह हम सबके पास ही रहेगी। और कुछ भी न सही, रानीके होठोंपर बैठकर यह 'श्याम-श्याम' ही बोलने लग जाये। इतनेसे ही हम सब संतोष कर लेंगी। कम-से-कम इतना तो तुम जान ही लोगे कि मेरी प्रिया मेरा नाम लेकर मुझे पुकार रही है।

सखियोंके बीचमें यह परामर्श चल ही रहा था कि रानीने इसका विरोध किया। रानी बोली—मैं यह नहीं सह सकती कि मेरे प्यारे श्यामसुन्दरको उनकी इच्छाके बिना ही मेरे पास मोहित होकर आना पड़े।

सखियोंने बहुत समझाया, पर उन्होंने एक नहीं सुनी। फिर यह निश्चित हुआ कि एक विनोद ही आज किया जाये। श्यामसुन्दर आवें तो उनके सामने ऐसा दृश्य हम सब उपस्थित करें मानो यहाँ कुछ हुआ ही नहीं हो। रूपमञ्जरी छिप जाये। हम सब कह देंगी कि ललिताने किसी कामसे उसे बाहर भेजा है। वह तो अभीतक लौटी ही नहीं है। फिर हमलोग देखें, प्यारे श्यामसुन्दर वंशीको ढूँढ निकालनेके लिये क्या उपाय रचते हैं। इस बातको रानीने स्वीकार कर लिया तथा उसे अपनी कञ्चुकीमें छिपाकर बैठी रही।

ललिताने कहा—तेरे द्वारा छिपाये रखना है तो कठिन, पर कोई बात नहीं, पहले तू ही छिपाकर रख। मैं सँभाल लूँगी।

इस निश्चयके साथ ही सभी बैठी थीं, पर श्यामसुन्दरको देर होते देखकर रानी वंशीको निकालकर भावाविष्ट होकर उससे बातें करने लग गयीं। भावावेशमें रानी अभ्यासवश वंशीको होठोंतक तो ले जाती हैं, पर उसे होठोंके ऊपर रखनेके पहले ही नीचे उतारकर देखती हैं तथा सोचती हैं कि आज यह मूर्च्छित हो गयी है। आज मेरे फूँकनेपर भी यह 'श्याम-श्याम' नहीं बोल रही है। वंशीके सम्बन्धमें यह भावना रानीके निर्मल प्रेमको अतिशय उद्दीप्त कर देती है। अपने भीतर प्रेमकी कमीका अनुभव करके रानी रोने लग जाती हैं। उन्हें सिसक-सिसककर रोते देखकर सखियाँ चिन्तित होने लग जाती हैं कि वंशी-हरणका खेल बने या बिगड़े, पर यदि कहीं मेरी प्यारी सखी पुनः मूर्च्छित हुई तो फिर कैसे चेत कराया जायेगा।

रानीको रोते देखकर बात पलटनेके लिये ललिता एक चतुराई करती है। अत्यन्त प्यारसे रानीके पास जाकर गलेमें बाँह डालकर आँसू पोंछती हुई कहती है—बहिन ! तू रो रही है और तेरे रोनेसे कुञ्जके सभी पक्षी नीरव-से हो गये हैं। देख, इससे प्यारे श्यामसुन्दर निश्चय ही जान जायेंगे कि मेरी प्रिया रो रही है, फिर वे भी रोने लग जायेंगे। वे भला कितने दुखी होंगे, तू ही बता !

ललिताकी बात सुनकर रानी चौंक-सी जाती है तथा कहती है—अयँ, मेरे प्यारे श्यामसुन्दर दुखी हो जायेंगे ? ओह ! तब मैं नहीं रोऊँगी, तनिक भी नहीं रोऊँगी। ना, मैं कहाँ रोती हूँ ? मैं तो हँस रही हूँ। मैं तो हँस रही हूँ। कुञ्जके पक्षियो ! तुम मधुर कलरव आरम्भ करो। देखना भला, मेरे प्यारे श्यामसुन्दरके पास मेरे अभी-अभी रोनेका समाचार पहुँचने न पावे।

रानी गम्भीर होकर बैठ जाती है तथा वंशी, जो गोदमें पड़ी थी, उसे उठाकर फिर कञ्चुकीमें रख लेती है। ललिता सोचती है कि यह फिर अधिक भावाविष्ट न हो जाये, इसलिये तुरंत ही रानीसे बातें करने लग जाती है, जिससे वे बातोंमें फँस जायें। ललिता कहती है—देख ! श्यामसुन्दर आनेवाले ही हैं। सावधान हो जा, वंशीकी बात बताना मत भला !

रानी—नहीं बताऊँगी ।

ललिता—फिर यदि श्यामसुन्दर व्याकुल होकर पूछेंगे, तब ?

रानी—तो बता दूँगी ।

ललिता हँस पड़ती है और कहती है—तब तू मुझे वंशी दे दे ।

रानी—ना ! मैं तुम्हें नहीं दूँगी ।

ललिता—अरे ! देगी भी नहीं और श्यामसुन्दरको बता भी देगी, यह तो तुम अच्छा खेल करने चली ।

रानी कुछ गम्भीर होकर कहती हैं—ललिते ! देख । मैं बताती नहीं, पर जब कभी भी श्यामसुन्दर प्यारभरी दृष्टिसे कुछ भी पूछते हैं तो बरबस आँखें संकेत कर देनेके लिये घूम जाती हैं । कई बार तुम लोगोंकी बात मानकर निश्चय किया कि प्यारे श्यामसुन्दरसे छिपा लूँगी; पर छिपा पाती नहीं । उन्हें देखते ही सब कुछ भूल जाती हूँ

ललिता—अच्छा, एक काम कर ! जब वे आवें, तब तू उन्हें देखना मत । देखनेसे ही गड़बड़ी होती है ।

रानी—आह ! तू बड़ी भोली है । अरे ! वे आवें और मेरी आँखें उन्हें देखें नहीं, यह कैसे हो सकता है ?

ललिता—अच्छा, देख भी लेना, पर वंशीकी बात फिर छिपा लेना ।

रानी—अच्छा, आज पूरी चेष्टा करूँगी ।

रानी यह कह ही रही थीं कि श्यामसुन्दर वहाँ आ पहुँचते हैं । वे तीव्र गतिसे चलते हुए आते हैं और निर्मल जलकी नालीपर आकर खड़े हो जाते हैं । श्रीप्रिया निर्निमेष नयनोंसे उन्हें देखने लग जाती हैं । श्यामसुन्दरको आते देखकर रूपमञ्जरी पासकी ही एक झाड़ीकी आड़में जाकर छिप जाती है । उनके आनेपर वहाँ सबमें आनन्द छा जाता है । विशाखा दौड़कर श्यामसुन्दरका हाथ पकड़ लेती है तथा कहती है—देखो ! आज मेरी सखी राधा पासेमें दाँव रखकर तुम्हें हार चुकी है, अतः आज तुम्हारे ऊपर मेरा अधिकार है । अभी दो घंटेसे हमलोग खेल रही थीं । आज बड़ा सुन्दर खेल हुआ ।

श्यामसुन्दर कुछ चकित होकर विचारमें पड़ जाते हैं तथा धीरेसे पूछते हैं—रूपमञ्जरी कहाँ गयी ?

विशाखा—पूजाकी कुछ सामग्री घरपर छूट गयी थी, ललिताने उसको लानेके लिये बहुत देर पहले उसे भेजा है।

श्यामसुन्दर कुछ आश्चर्यमें पड़ जाते हैं तथा कहते हैं—क्यों, हमारी वंशी लेकर वह यहाँ नहीं आयी ?

विशाखा—तुम्हारी वंशी लेकर वह क्यों आती ? भाँग तो तुमने नहीं छानी है ?

श्यामसुन्दरकी बात सुनकर ललिता हँसती हुई कहती है—ऐसा लगता है कि आज तुम्हारी वंशी तुम्हारे हाथसे जाती रही है। रूपमञ्जरी राहमें मिली होगी, अतः तुम्हें संदेह हुआ है कि उसने वंशी कहीं छिपायी है। क्यों, यही बात है न ?

श्यामसुन्दर कुछ देर सोचकर समझ जाते हैं कि इन सबने मिलकर कोई चतुराई की है, अतः सावधानीपूर्वक श्रीप्रियासे कुछ संकेत-ही-संकेतमें पूछ लूँ कि वस्तुतः बात क्या है, वंशी लेकर यहाँ रूपमञ्जरी आयी या नहीं। प्रियासे इतनी बात तो पूछ ही लूँ, फिर तो सरलतासे वंशीको खोज निकालूँगा। ऐसा सोचकर श्यामसुन्दर श्रीप्रियाकी ओर देखने लग जाते हैं। दृष्टि मिलते ही श्रीप्रियामें प्रेमका आवेश बढ़ने लग जाता है। श्यामसुन्दर कुछ पासमें जाकर खड़े हो जाते हैं—प्रिये ! तू जानती है, मुझे वंशी कितनी प्यारी है ! यदि वह तुम्हारी दृष्टिमें हो, तब तो चिन्ताकी कोई बात नहीं। वंशी आज कह भी रही थी कि प्यारे श्यामसुन्दर ! रानीकी सखियाँ मुझे तुमसे अलग करना चाहती हैं। मेरे सौभाग्यसे उन्हें ईर्ष्या होने लग गयी है। अतः रानीके चरणोंमें मुझे पहुँचा दो। मैं रानीसे विनती करूँगी कि आपकी सखियाँ मुझसे व्यर्थ ही अप्रसन्न हैं। मैं किसीका कुछ बिगाड़ती नहीं। श्यामसुन्दर मुझे बोलनेके लिये कहते हैं तो मैं बोलती हूँ। वे नहीं कहते तो मैं चुप रहती हूँ। तुम्हीं बताओ कि मैं अपना धर्म कैसे बिगाड़ दूँ। अपने स्वामी श्यामसुन्दरकी आज्ञा न माननेसे तो मैं कुलटा बन जाऊँगी। मेरी रानी ! तुमसे बढ़कर मुझे धर्मका मर्म कौन बतायेगा, इसलिये तुम्हारे पास आयी हूँ। तुम्हीं निर्णय कर दो, यदि मेरा अपराध

हो तो मुझे अपनी सखियोंको सौंप दो। यदि सखियोंका अपराध हो तो उन्हें मेरे हाथ सौंप दो। मैं उन्हें ले जाकर अपने स्वामी प्यारे श्यामसुन्दरके हाथमें दे दूँगी। फिर वे जो आज्ञा करेंगे, वैसा ही व्यवहार इनके साथ करूँगी। मेरी प्राणेश्वरी! वंशीकी बात सुनकर मैं सोचने लगा कि यदि तुम्हारी सखियाँ इसे मुझसे अलग कर देंगी तो यह बड़ी दुःखी होगी। यह तो पतिव्रता है, दिन-रात एकनिष्ठ मनसे मेरी सेवा करती है। यह तो अलग होकर भी मेरी ही रहेगी; पर मैं चाहता हूँ कि इसे दुःख न हो। यह कई बार मुझसे कह चुकी है कि प्यारे! रानीकी सखियाँ मुझे उनके इच्छानुसार बजनेके लिये कहती हैं; पर मैं तो तुम्हारी इच्छाके बिना बज नहीं सकती और उनका चित्त भी दुखाना नहीं चाहती। इसलिये कभी-कभी मनमें आता है कि मेरे स्थानपर तुम भी हेंगी* बहिनको रखो। फिर रानीकी सखियोंको भी ईर्ष्या नहीं होगी। वे फिर स्वयं सारा रहस्य भी समझ जायँगी। प्रियतमे! आज वह वंशी इतनी मचल गयी थी कि रूठकर चले जानेकी भी धमकी दे चुकी थी। इसलिये मैं सोचता हूँ कि वह यदि कहीं रूठकर गयी हो, पर मुझसे अलग होकर तेरे पास आयी हो तो सुखी होगी; नहीं तो बहुत रोती होगी। अतः तूने उसे कहीं देखा हो तो बता देना।

श्यामसुन्दरकी बात सुनकर सखियाँ तो उच्च स्वरसे हँसती हैं, पर

---

*श्यामसुन्दर सोनेकी, बाँसकी बनी हुई मुरली, वंशी आदि रखते हैं। जिस समय उनके हाथमें सोनेकी वंशी रहती है, उस समय सखियोंके अङ्गोंके आभूषण प्रफुल्लित हो जाते हैं कि हमारी जातिका इतना भाग्योदय हुआ है कि हममेंसे एक प्यारे श्यामसुन्दरके होठोंसे लग रही है। इस आनन्दमें स्वयं सभी सोनेके आभूषण उन्मत्त होकर मुरलीकी ध्वनिमें ध्वनि मिलाकर बजने लग जाते हैं तथा सखियाँ ऐसा अनुभव करती हैं कि मेरे बहुत रोकनेपर भी ये आभूषण विवश होकर श्यामसुन्दरकी मुरलीकी ओर जा मिले हैं। स्थिति यहाँतक हो जाती है कि आभूषणोंकी ध्वनि उनके हृदयमें जाकर और अनन्तगुनी होकर, ठीक श्यामसुन्दरके स्वरमें ही हृदयके स्वरको भी बाँध देती है। वे बावली-सी होकर उसी प्रकार बड़-बड़ करने लग जाती हैं।

रानी कुछ गम्भीर होकर कहती है—प्यारे ! वंशी तुम्हारे हृदयमें ही कहीं जा छिपी होगी ।

रानीकी बात सुनकर ललिता कुछ चिढ़-सी जाती है; पर उसे छिपाकर कहती है—अच्छा श्यामसुन्दर ! तुम एक काम करो ! मैं अभी-अभी तुम्हारी रूठी हुई वंशीको खोज लाऊँगी तथा मना भी दूँगी। पर तुम आज विशाखाको अपने हाथसे फूलोंका तोता बनाकर दे दो; फिर हम सब मिलकर तुम्हें कल एक बहुत बढ़िया खेल दिखायेंगी ।

ललिता यह कहकर रानीके सामने चली जाती है तथा श्यामसुन्दरको आड़में करके रानीसे कुछ संकेत करती है। रानी घूमकर पश्चिम एवं उत्तरके कोनेकी ओर देखने लग जाती है । विशाखा चतुराईसे श्यामसुन्दरको राधाकुण्डकी ओर फिरा देती है। इसी बीच ललिता वंशीको श्रीराधाकी कञ्चुकीसे निकालकर बड़ी कुशलतासे अपनी कञ्चुकीमें रख लेती है। इतनेमें श्यामसुन्दर उधर ही देखने लग जाते हैं। ललिताने वंशी बड़ी शीघ्रतासे छिपा ली और छिपाकर बोली—देखो ! यह मेरी सखी आधी बावली है। अभी-अभी कुछ कहती है, फिर कुछ कहने लग जायेगी। मैं तो उससे बहुत दुखी हो गयी हूँ। तुम एक काम और भी करो। अपने हाथसे अपना एक चित्र बनाकर इसे दे दो। तुम्हारे पीछे उसी चित्रके सहारे मैं इसे सान्त्वना देती रहूँगी।

श्यामसुन्दर मुस्कुराते हैं, पर मन-ही-मन वंशीको शीघ्र खोज निकालनेकी चेष्टामें लगे हैं। श्रीप्रियाकी बात सुनकर यह तो वे जान ही गये कि वंशी मेरी प्यारीके पास ही है; पर अब उसे ललिताने ले लिया था। श्रीप्रियाने भी संकेतसे यह बात बता दी कि ललिताने उसे ले लिया है; अतः ललिताको भरपूर छकानेकी युक्ति सोचते हुए श्यामसुन्दर खड़े हैं। युक्ति सूझ जाती है। वे तुरंत अपनी आँखें बंद करके कहते हैं—देख, मेरा सिर घूम रहा है। मैं थोड़ा लेट जाना चाहता हूँ, घबराना नहीं; साधारण-सी पीड़ा है ।

श्यामसुन्दर वहीं लेट जाते हैं। श्रीप्रिया बहुत घबरायी-सी होकर उनके पास जा पहुँचती हैं। श्रीप्रियाको श्यामसुन्दर संकेत कर देते हैं कि घबराना मत, मुझे कोई पीड़ा नहीं है, ललिताको छकाना है। फिर भी

रानी कुछ घबरायी-सी रहती हैं। श्यामसुन्दर श्रीप्रियाके हाथको पकड़कर और दबाकर संकेतमें कह देते हैं कि मैं पूर्णतः स्वस्थ हूँ, तब प्रियाको धैर्य बँधता है।

श्यामसुन्दर धीरेसे उठकर बैठ जाते हैं तथा कहते हैं ललिते! कुछ दिन पहले मेरी प्रियाने एक दिन निकुञ्जमें मेरी वंशी छिपा दी थी। भाद्रपदकी पूर्णिमाके दिनकी बात है। पुष्पोंकी शय्यापर हम दोनों बैठे थे। समस्त निकुञ्ज पुष्पोंसे सजा हुआ था। तब मैं प्रियासे बोला कि अच्छी बात है, वंशी आजसे तेरी दासी होकर रहेगी; पर देखना भला, मेरे अधर-रसका पान करके ही वह जीती रहती है, इसलिये तू अपना अधर-रस उसे नियमसे पिला देना, नहीं तो भूखी रहेगी। देख, यदि तू कभी भूल जायेगी तो उसकी दशा देखकर तू स्वयं रोयेगी और तुझे रोती देखकर मैं भी रोने लग जाऊँगा।

श्रीप्रिया बड़ी उत्कण्ठासे सुन रही हैं। उस दिनवाली निकुञ्जलीलाकी बात उन्हें प्रेममें अधिकाधिक अधीर बनाती जा रही है। श्यामसुन्दर फिर कहते हैं—हाँ, तब इसके बाद क्या हुआ, सो तुम्हें सुनाता हूँ। मेरी प्रियाकी आँखोंसे प्रेम झर रहा था। मैं एकटक प्रियाकी आँखोंसे आँख मिलाये देख रहा था। उस समय प्रिया मुझसे बोली कि प्राणेश्वर! वंशी तो मैं अभी-अभी दे दूँगी, पर मेरी एक बात सुनो। कई दिनोंसे मैं तुमसे कहना चाह रही थी; तुम्हें देखकर वह बात भूल जाया करती थी। आज वह बात याद आ गयी है। देखो, प्रत्येक संध्यामें ललिता मेरा शृङ्गार करती है। शृङ्गार करके आनन्दमें मग्न हो जाती है। उसे आनन्दमें बावली देखकर मैं सोचती हूँ कि मेरेमें सुन्दरता तो है ही नहीं; पर जब इस बावलीने सजाया है तो मैं देख तो लूँ कि तुम्हारी सेवाके लिये तुम्हारी दासीको इसने कैसा सजाया है! वह दर्पण मेरे सामने ले आती है; पर प्राणेश्वर! पता नहीं क्यों, मुझे अपना मुख नहीं दिखलायी देकर तुम्हारा मुख दीखने लग जाता है। बहुत सोचते-सोचते आज यह निर्णय कर पायी हूँ कि तुम मुझे अतिशय प्यार करते हो; तुम्हारे हृदयका प्यार मुझे चारों ओरसे घेरे रहता है; इसीलिये मुझे अपना प्रतिबिम्ब दिखलायी न देकर तुम्हारा दीखता है। मेरे जीवनसर्वस्व! आज भी ऐसा ही हुआ था। उस समय मनमें आया कि अहा! यह प्रतिबिम्ब कितना सुन्दर है।

फिर यदि किसी दिन श्यामसुन्दर अपने हाथोंसे ठीक अपने ही समान अपनी वेष-भूषामें मुझे सजा दें तो वह प्रतिबिम्ब कितना सुन्दर होगा! इसलिये प्यारे! आज अपने हाथसे तुम मुझे अपनी धोती पहना दो, दुपट्टा ओढ़ा दो, मेरे केशोंको ठीक अपने-जैसे कंधोंपर बिखेर दो, मयूरपिच्छका मुकुट मेरे सिरपर बाँध दो और वंशी मेरे होठोंपर रख दो। फिर मैं देखूँगी कि दर्पणमें कैसी छवि प्रतिबिम्बित होती है।

श्यामसुन्दर ललितासे ये बातें कहते जा रहे थे एवं प्रिया सर्वथा उसी भावसे आविष्ट होती जा रही थीं। श्यामसुन्दरने श्रीप्रियाकी दशाको देखकर एक बार मुस्कुरा दिया और फिर बोले—ललिते! मैंने प्रियाको ठीक उसी भाँति सजा दिया है

श्यामसुन्दरके मुखसे यह बात निकलते ही श्रीप्रिया अतिशय भावाविष्ट होकर मूर्च्छित हो जाती हैं। श्यामसुन्दर अतिशय प्रेमसे उन्हें गोदमें लिटा लेते हैं। कुछ देर ठहरकर श्रीप्रिया उसी भावावेशमें बोल उठती हैं—हाँ, वंशी मेरे होठोंपर रख दो!

श्यामसुन्दर बड़ी चतुराईसे कहते हैं—प्रिये! वंशी तो तुमने ही छिपाकर रखी है। निकाल कर दे, मैं तेरे होठोंपर रख दूँ।

श्रीप्रिया श्यामसुन्दरकी बात सुनकर कञ्चुकीके भीतर हाथ ले जाती हैं। फिर भावावेशमें ही बोलती हैं—अरे! क्या हो गयी? कहाँ चली गयी? आह! मैंने तो उसे यहीं छिपाकर रख रखा था! कौन उठा ले गयी?

श्रीप्रिया अतिशय व्याकुल होकर रोने लग जाती हैं तथा रोकर कहती हैं—हाय, हाय! मेरे प्यारे श्यामसुन्दरकी वंशी मेरे हृदयके पाससे कौन ले गयी? ना, कोई हो, ठिठोली मत करो, वंशी ला दो। मैं एक बार होठोंपर रखकर अपना प्रतिबिम्ब देखना चाहती हूँ।

श्रीप्रियाकी दशा देखकर ललिता गम्भीर हो जाती हैं। श्यामसुन्दर मुस्कुराकर बहुत धीरेसे, जिससे श्रीप्रिया नहीं सुन पायें, कहते हैं—ललिता रानी! अब अपनी सखीको सँभालो। शीघ्र वंशी लाओ, नहीं तो दशा देख लो! आगे क्या होगा, स्वयं सोच सकती हो।

ललिता घबरायी-सी होकर वंशी अपनी कञ्चुकीसे निकालकर श्यामसुन्दरके हाथमें दे देती हैं। फिर किंचित् हँसकर कहती हैं—श्यामसुन्दर! तुम सचमुच बड़े धूर्त हो। अच्छा, फिर कभी बात।

श्यामसुन्दर वंशी लेकर श्रीप्रियाके होठोंपर रख देते हैं। वंशी होठोंपर रखते ही प्रिया प्रसन्न हो जाती हैं तथा भावावेशमें ऐसा अनुभव करने लगती हैं कि मैं दर्पणमें प्रतिबिम्बकी शोभा निहार रही हूँ। रानी कुछ देरतक इसी मुद्रामें बैठी रहती हैं, फिर मूर्च्छित होकर श्यामसुन्दरकी गोदमें गिर पड़ती हैं। श्यामसुन्दर श्रीप्रियाको गोदमें लिटाये हुए उसके मुखकी शोभा निहारने लग जाते हैं।

कुछ देर बाद श्रीप्रियाको चेत हो जाता है। श्रीप्रिया उठ बैठती हैं तथा कुछ लजा जाती हैं। इधर श्यामसुन्दर अपने हाथमें वंशी लेकर खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं। फिर कुछ देर बाद हँसते हुए कहते हैं—प्रिये! आज तो मेरा बहुत काम बन गया। अब देख, वंशीसे मैं सब रहस्य जान लेता हूँ।

इसके बाद श्यामसुन्दर वंशीको सिरसे लगाते हैं, फिर उसे चूमकर कहते हैं—वंशिके! तेरा अहोभाग्य है। ललितारानीके हृदयके पास रहकर आयी है; पर अब कुछ हमें भी तो बता कि ललितारानीके हृदयमें तुमने क्या देखा-सुना।

वंशीसे निवेदन करके श्यामसुन्दर उसे कानोंके पास ले जाते हैं। फिर हँसकर राधारानीसे कहते हैं—प्रिये! तू सुनेगी, वंशीने मुझे क्या समाचार सुनाया है?

रानी उत्कण्ठाभरे स्वरमें कहती हैं—सुनाओ!

सभी सखियाँ भी अत्यन्त उत्कण्ठित हो जाती हैं; पर ललिता कुछ काँप रही हैं। श्यामसुन्दर कहते हैं—वंशिके! तुमने जो मुझसे कहा है, वही सुन्दर स्वरमें गाकर सबको सुना दो।

श्यामसुन्दर वंशीमें सुर भरने लगते हैं। वंशीसे अत्यन्त मधुर स्वरमें गान होने लग जाता है। सभी सखियाँ यही अनुभव कर रही हैं

कि वंशीके छिद्रोंसे ये शब्द निकल रहे हैं—प्यारे श्यामसुन्दर! ललिताके हृदयके अन्तस्तलमें जो पद गूँज रहा था और जिसे मैं सुनकर आयी हूँ, वही सुना रही हूँ—

स्याम रूप मैं तेज अधर रस जलहिं मिलाऊँ।
मुरलि अकास मिलाय पवन मैं प्राननि छाऊँ॥
मुख मंडित गोधूलि अली टुक देख न पाऊँ।
पृथ्वी अंग मिलाय तासु मैं प्रियतम ध्याऊँ॥

(पदका भाव यह है—मेरा शरीर पाँच तत्त्वोंका बना हुआ है। पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और आकाश। इनके संयोगसे ही यह शरीर बना है। पर प्यारे श्यामसुन्दर तो इस शरीरके कारण बहुत दूर पड़ जाते हैं, इसलिये मैं उनकी शोभाको ठीक-ठीक निहार नहीं पाती। हाँ सखी! सर्वथा यही बात है। यह शरीर बड़ा व्यवधान बन गया है। पर एक बात कर लूँ तो काम बन जाये। इस शरीरके पाँचों तत्त्वोंको अलग-अलग कर दूँ। अलग-अलग करके तेजतत्त्वको श्यामसुन्दरके रूपके तेजमें मिला दूँ; श्यामसुन्दरके अधरोंमें जो रस है, उसमें जलतत्त्वको मिला दूँ; मुरलीके भीतरी खोखले अंशके आकाशमें आकाशतत्त्वको मिला दूँ; श्यामसुन्दरके प्राणवायुमें शरीरके वायुतत्त्वको घुला-मिला दूँ। शेष रहा पृथ्वीतत्त्व। यदि भाग्यसे संध्याके समय श्यामसुन्दरका कभी दर्शन हो जाये तो उनके मुखारविन्दपर गोधूलि-कणका दर्शन पाऊँगी ही, उन्हीं रजकणोंमें अपने शरीरके पृथ्वीतत्त्वको मिला दूँ। फिर प्यारे श्यामसुन्दरको ठीकसे देख पाऊँगी, तभी उनका ध्यान ठीकसे हो सकेगा। तभी वे मेरे हृदयमें सदाके लिये आ बसेंगे।)

वंशीकी सुरीली तानने सबको प्रेममें बेसुध बना दिया। ललिता तो बावली-सी होकर दौड़ पड़ती है तथा श्यामसुन्दरके गलेसे चिपटकर मूर्च्छित हो जाती है। बड़ी निराली झाँकी है। सखियाँ चारों ओर प्रेममें झूम रही हैं। राधारानी श्यामसुन्दरका बायाँ कंधा दोनों हाथोंसे पकड़कर पत्थरकी मूर्ति-सी खड़ी हुई बैठी हैं। ललिता गलेमें बाँह डाले मूर्च्छित पड़ी है। श्यामसुन्दर स्वयं मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए प्रेममें झूम रहे हैं। कुछ क्षणके बाद ललिताको चेत हो आता है; पर फिर भी आँखें बंद हैं। श्यामसुन्दर प्यारसे ललिताके मुखको सहलाने लगते हैं। पूरा चेत

हो जानेपर ललिता लजायी हुई वहींपर कुछ हटकर बैठ जाती हैं। सर्वत्र प्रेम, शान्ति एवं नीरवता छायी हुई है। नीरवताको भङ्ग करते हुए श्यामसुन्दर हँसकर कहते हैं—ललितारानी! मेरी वंशीका चमत्कार देख लो। अहा! मेरी वंशी कितनी सेवा करती है? मुझसे अलग होकर भी इसने मेरी सेवाका कैसा सुन्दर उपाय किया है? तुम-जैसी हठीली-गर्वीलीको भी बरबस मालाकी तरह मेरे गलेमें झूलना पड़ा। मेरी प्यारी वंशिके! तेरी जय हो।

श्यामसुन्दर फिर रुककर कहते हैं—क्यों, ललितारानी! मेरी वंशी छिपानेका दण्ड अभी तुमसे लेना शेष है।

रूपमञ्जरी बहुत पहले रानीके होठोंपर वंशी रखते ही वहाँ आकर खड़ी हो गयी थी। श्यामसुन्दर उसकी ओर तथा सुदेवीकी ओर देखकर कहते हैं—रूप! तुमने भले घर निमन्त्रण दिया है। याद रखना, अपनी यूथेश्वरी ललितारानीके साथ मिलकर चोरीमें सहायता करनेका दण्ड तुम्हें भी भोगना पड़ेगा। सुदेवी! तुम्हारी जानकारीमें तुम्हारे कुञ्जमें यह अन्याय हुआ है कि मेरी प्यारी वंशीको मुझसे अलग कर दिया गया और वह भी पूरा षड्यन्त्र रचकर! अतः तुम्हें भी संध्या होनेके पहले-पहले इसका दण्ड भोगना पड़ेगा। सावधान रहना, पहलेसे ही सूचना दे रहा हूँ।

श्यामसुन्दरकी अतिशय प्यारभरी बात सुनकर सखियाँ पुनः प्रेममें विभोर हो जाती हैं; पर कुछ सँभलकर सुदेवी कहती है—जो होगा, देख लूँगी; पर तुम्हीं बताओ, यह क्या कम है कि खोयी हुई वंशी मेरे ही कुञ्जमें तुम्हारे पास पुनः आ गयी है? इसलिये चलो, संगीत-महोत्सवमें इसे ले चलो। वहाँ कुछ इसके चमत्कारका प्रदर्शन करो।

श्यामसुन्दर सुदेवीकी बात सुनकर प्रसन्न हो जाते हैं तथा श्रीप्रिया एवं ललिता, दोनोंको अपने बायें-दायें लिये-लिये पाटल कुञ्जकी ओर संगीत-महोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये चल पड़ते हैं।

॥ जियत्येतौ श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

पाद संलालन लीला

राजत निकुंज धाम ठकुरानी ।
कुसुम सेज पर पौढ़ी प्यारी राग सुनत मृदु बानी ॥
बैठीं ललिता चरन पलोटत लाल दृष्टि ललचानी ।
पायँ परत सजनी के मोहन हित सौं हा हा खानी ॥
भई कृपाल लाल पर ललिता दे अग्या मुसुकानी ।
जाओ मोहन चरन पलोटो जैसे कुँवरि न जानी ॥
अग्या दई सखी को प्यारी मुख ऊपर पट तानी ।
बीन बजाय गाय कछु तानन ज्यों उपजै सुख सानी ॥
गावन लगे रसिक मन मोहन तब जानी महरानी ।
उठ बैठीं व्यास की स्वामिनी श्रीवृंदावन रानी ॥

श्रीरङ्गदेवीके कुञ्जमें श्रीराधारानी श्रीकृष्णकी प्रतीक्षामें हैं। निकुञ्ज केलेके पत्तोंका बना हुआ है। स्वाभाविक ही वहाँ केलेके वृक्ष सटे-सटे लगे हुए हैं। वे केलेके वृक्ष ही खंभेका काम कर रहे हैं। उनके कोमल-कोमल पत्ते इस प्रकार पिरो दिये गये हैं मानो केलेके पत्तोंका मन्दिर बनाया गया हो। केलेके पत्ते दीवालका काम कर रहे हैं तथा कोमल पत्तोंका ही अत्यन्त सुन्दर ढंगसे बीचमें गुम्बज बना हुआ है। उसके उत्तर-दक्षिणमें दो द्वार हैं, जो गुलाबके फूलोंसे सजाये हुए हैं। पूर्व-पश्चिमकी ओर एक-एक खिड़की है, उसे भी गुलाबके फूलोंसे सजा दिया गया है। भीतरसे निकुञ्जका व्यास दस गज है। बीचमें एक पलंग बिछा हुआ है। पलंगकी रचना बड़ी कलापूर्ण है। चन्दनके पाये तथा चन्दनकी पाटीसे पलंगके आकारका निर्माण करके उन्हें पतले और सुपुष्ट रेशमी धागोंसे एक-एक अँगुलका छिद्र रखकर बुन दिया गया है। छिद्रोंमें सुरंगके खिले हुए कमलके फूलोंको इस प्रकार पिरो दिया गया है मानो सुन्दर खिले हुए कमलोंका बिछौना बिछा हुआ हो। पलंगके पाये एवं पाटियोंको भी

कमलके फूलोंसे सजा दिया गया है; ऐसा लगता है मानो कमलके फूलोंका ही पलंग है। पलंगका सिर दक्षिणकी ओर है। सिरकी ओर कमलके फूलोंका ही एक तकिया है। उसी फूलोंकी शय्यापर राधारानी बायीं करवट लेटी हुई हैं। उनका सिर दक्षिणकी ओर है तथा पैर उत्तरकी ओर।

राधारानीके चरणोंके पास ललिता अपना चरण पलंगसे नीचे लटकाये बैठी हैं। ललिताकी गोदमें ही राधारानीके चरण हैं। वे चरणोंको धीरे-धीरे दबा रही हैं। ललिताका मुख ठीक पश्चिमकी ओर है। दो हाथ पश्चिमकी ओर हटकर पलंगके सिरहाने कमलके फूलोंका ही गद्दा बिछा हुआ है, जिसपर कुछ सखियाँ बैठी हैं। उसी गद्देपर मधुमती मञ्जरी अपने कंधेपर वीणाको टेके हुए बजानेकी मुद्रामें बैठी हुई है। निकुञ्जके पश्चिम एवं उत्तरकी ओर दीवालके सहारे एक छोटी चौकी है, जिसपर दो सोनेकी परातें रखी हुई हैं। एक परातमें पके हुए केले हैं तथा दूसरी परातमें केलेके पत्तेपर मोटी-मोटी फूलोंकी मालाएँ रखी हुई हैं। उसी चौकीपर जलसे भरी हुई सोनेकी बड़ी झारी एवं सोनेके अत्यन्त सुन्दर कुछ गिलास भी हैं। निकुञ्ज केलेकी भीनी-भीनी गन्धसे सुवासित हो रहा है। राधारानीके सिरके पास, पर पीठकी ओर विशाखा बैठी हुई हैं और वे उत्तरकी ओर मुख किये हुए पंखा झल रही हैं। वह सुन्दर पंखा खसका बना हुआ है और उसमें कमलकी पंखुड़ियोंको सुन्दर ढंगसे पिरो दिया गया है।

राधारानी कभी आँखें खोलती हैं, कभी बंद कर लेती हैं। जब खोलती हैं तो एक बार उत्तरकी ओर देख लेती हैं कि श्रीकृष्ण आ रहे हैं या नहीं। अब ललिता मधुमतीमञ्जरीको संकेत करती हैं। मधुमतीमञ्जरी अत्यन्त मधुर स्वरमें वीणाको बजाती हुई गाने लगती है---

कोई दिलवर को डगर बताय दे रे।
लोचन कंज कुटिल भृकुटि कर कानन कथा सुनाय दे रे॥
जाके रंग रंग्यो सब तन मन ताकी झलक दिखाय दे रे।
ललितकिसोरी मेरी वाको चित को साँट मिलाय दे रे॥

गीत सुनते-सुनते श्रीराधा कुछ व्याकुल-सी हो जाती हैं तथा पलंगपर उठकर बैठ जाती हैं। उनके चरण ललिताकी गोदमें ही रहते हैं। उत्तरकी ओर कुछ देरतक देखती हुई फिर लेट जाती हैं। विशाखा पंखा चित्राके हाथमें दे देती हैं। चित्रा सिरकी ओर पलंगके पास खड़ी होकर पंखा झलती हैं। विशाखा अपना बायाँ हाथ राधारानीके लिलारपर रखकर और दाहिने हाथमें सुन्दर रूमाल लेकर मोती-जैसे छोटे-छोटे श्रम-बिन्दुओंको पोंछती हैं, जो राधारानीके मुखपर प्रेमके आवेशके कारण निकल आये थे तथा बहुत धीरे-धीरे कहती हैं-- बस, अब आते ही होंगे।

श्रीराधा अपने बायें हाथसे विशाखाके दाहिने हाथकी हथेली पकड़ लेती हैं एवं गलेमें ही जूहीके फूलोंका जो गजरा था, उसमेंसे एक फूल निकालकर उसीसे विशाखाकी हथेलीपर 'कृष्ण-कृष्ण' लिखती हैं तथा फिर उसे अपने लिलारपर रखकर और दोनों हाथोंसे उसे दबाकर आँखें मूँद लेती हैं। हाथको दबाये हुए ही बायीं ओर करवट ले लेती हैं।

इसी समय निकुञ्जकी पूर्वी खिड़कीके पास श्यामसुन्दर चुपकेसे आकर खड़े हो जाते हैं। विशाखाकी दृष्टि श्रीकृष्णपर पड़ जाती है, पर श्रीकृष्ण अपने दोनों हाथोंको जोड़कर फिर दाहिने हाथकी तर्जनी अँगुलीसे अपना मुँह ढककर विशाखाको संकेत करते हैं कि चुप रहना, कुछ बोलना मत। विशाखा मुस्कुराती हैं, कुछ बोलती नहीं; पर ललिताको धीरेसे संकेत कर देती हैं। ललिता पीछेकी ओर मुँह करके खिड़कीकी ओर देखने लगती हैं तथा श्रीकृष्णको देख लेती हैं। श्रीकृष्ण ललिताको भी कुछ न बोलनेका संकेत करते हैं। संकेत समझकर ललिता भी चुप रह जाती हैं। खिड़कीके पास खड़े रहकर फिर वहींसे श्रीकृष्ण हाथोंसे ललिताके चरणोंमें पड़कर प्रार्थना करनेका भाव दिखाते हैं तथा सांकेतिक रूपमें कहते हैं—चुपकेसे तुम हट जाओ! मैं तुम्हारे स्थानपर बैठकर राधाके चरणोंको दबाने लग जाऊँ, तुमसे यह भीख माँग रहा हूँ।

ललिता पहले तो मुस्कुराती हुई दो-तीन बार सिर हिला करके अस्वीकार करती हैं, पर फिर श्रीकृष्णके बार-बार अत्यन्त प्रेमभरी प्रार्थना करनेपर संकेत करती हैं—अच्छी बात है, धीरज धरो, वहीं खड़े रहो।

इसी समय राधारानी आँखें बंद किये हुए ही मधुमतीमञ्जरीसे कहती

है—मधुमती ! श्यामसुन्दरकी शोभाका वर्णन कर।

राधारानी तो एक नीले रूमालसे अपना मुँह ढक लेती हैं और मधुमती गायनकी आज्ञा होते ही वीणाके तारोंको छेड़ती हुई गाने लगती है—

मोहन मुखारबिंद पर मनमथ कोटिक वारौं री माई।
जहँ जहँ नैन दृष्टि परत है तहँ तहँ रहत लुभाई॥
अलक तिलक कुंडल कपोल छबि इक रसना मो पै बरनि न जाई।
गोबिंद प्रभु की बानिक ऊपर बलि बलि रसिक चूड़ामनि राई॥

संगीत प्रारम्भ होते ही राधारानी समाधिस्थ-सी हो जाती हैं। ललिता राधारानीके चरणोंको पलंगपर धीरेसे रख देती हैं। फिर उठकर खिड़कीके पास आती हैं तथा श्रीकृष्णसे धीरेसे कहती हैं—जाओ ! चरण दबाओ; पर सावधान रहना। राधारानी जानने नहीं पावें कि मेरे स्थानपर तुम आ गये हो।

श्रीकृष्ण बड़े प्रेमसे ललिताका दाहिना हाथ पकड़कर कृतज्ञता प्रकट करते हैं। फिर धीरे-धीरे उत्तरी द्वारसे आकर राधारानीके चरणोंके पास धीरेसे बैठ जाते हैं तथा धीरेसे ही राधारानीके चरणोंको अपनी गोदमें रखकर दबाने लग जाते हैं। इधर मधुमतीमञ्जरी अत्यन्त सुन्दर स्वरमें श्रीकृष्णके मुखारविन्दको देखती हुई गा रही है। कुछ देरतक वह बार-बार इस पदको दुहराती रहती है तथा श्रीकृष्ण अत्यन्त प्रेमसे श्रीराधारानीके चरण दबाते रहते हैं।

जब पद समाप्त होने लगता है तो श्रीकृष्ण उसी स्वरमें 'राधा मुखारबिंदपर काम सत कोटिक वारौं री माई' आरम्भ करते हैं। श्रीकृष्ण ज्यों ही आरम्भ करते हैं कि राधारानी चौंककर आँखें खोल देती हैं। आँखें खोलते ही देखती हैं कि मेरे पैर श्रीकृष्णकी गोदमें हैं। यह देखते ही वे घबरायी-सी होकर चरणोंको समेटती हुई उठकर पलंगपर बैठ जाती हैं तथा श्रीकृष्णका कंधा पकड़कर हँसने लगती हैं। श्रीकृष्ण भी खिलखिलाकर हँसते हुए उसी फूलोंकी शय्यापर लेट जाते हैं। सखियोंमें आनन्दकी बाढ़ आ जाती है। श्रीराधारानी पलंगसे नीचे उतर पड़ती

है। वे उत्तर एवं पूर्वकी ओर अपना मुँह करके, पलंगपर हाथोंको टेक करके, श्रीकृष्णके मुँहके पास सरक करके और दाहिने हाथसे श्रीकृष्णकी ठोडी पकड़कर कुछ सकुचाये स्वरमें मुस्कुराकर कहती हैं—किस वेतनके लालचमें यह सेवा हुई है।

श्रीकृष्ण मुस्कुराते हुए उठकर बैठ जाते हैं तथा श्रीप्रियाके अञ्चलसे अपने मुखका पसीना पोंछते हुए कहते हैं—वेतनकी बात ललिता जानती है, उससे पूछ लेना।

श्रीकृष्ण यह कहकर दक्षिणकी ओर सिर करके भली प्रकारसे पलंगपर लेट जाते हैं। राधारानी उसी पलंगपर श्रीकृष्णके समीप ही अपने चरण लटकाकर बैठ जाती हैं। श्रीकृष्णके बायें हाथको अपने बायें हाथसे पकड़ लेती हैं तथा चित्राके हाथसे फूलोंसे बने हुए पंखेको अपने दाहिने हाथमें लेकर श्रीकृष्णके मुखपर झलने लगती हैं। सखियाँ सेवाके कार्यमें लग जाती हैं।

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

वेणु निनाद लीला

रे मन करु नित निज यह ध्यान।
सुंदर रूप गौर श्यामल छवि जो नहिं होत बखान॥
मुकुट सीस चंद्रिका बनी कनफूल सुकुंडल कान।
कटि काछिनी सारी पग नूपुर बिछिया अनवट गान।
कर कंकन चूरी दोउ भुज पै बाजू सोभा देत।
केसर खौर बिंदु सेंदुर की देखत मन हरि लेत॥
मुख पै अलक दोउ पै बेनी नागिनि सी लहरात।
चटकीले पट निपट मनोहर नील पीत फहरात॥
मधुर मधुर अधरन बंसी धुनि तैसी ही मुसकानि।
दोउ नैनन रस भीनी चितवनि परम दया की खानि॥
ऐसो अदभुत भेष बिलोकत चकित होत सब आय।
हरीचंद बिनु जुगुल कृपा यह लख्यौ कौन पै जाय॥

श्रीप्रिया-प्रियतम श्रीरङ्गदेवीके कुञ्जमें एक फव्वारेकी सीढ़ीपर पैर लटकाये हुए विराजमान हैं। फव्वारा लगभग आठ हाथ ऊँचा है। वह अत्यन्त चमकते हुए किसी तैजस् धातुका बना है। फव्वारेके ऊपरका हंस भी उसी तैजस् धातुका बना हुआ है। उस हंसके मुँहमें डण्डीसहित जो कमल है, उसमें डण्डीका भाग तो हरे पत्थरका बना हुआ है एवं फूल लाल पत्थरका। हंसके फैले हुए पंखमें महीन छिद्र हैं, जिसमें जल निकल-निकलकर कुण्डमें गिर रहा है। उस हंसको देखनेपर यही प्रतीत हो रहा है मानो सचमुच ही सजीव हंस डण्टीसहित कमल मुँहमें लेकर फव्वारेपर बैठकर स्नान कर रहा हो।

फव्वारेके चारों ओर निर्मल जलका एक कुण्ड है। कुण्ड गोलाकार है तथा फव्वारेसे लेकर सब ओर अन्तिम छोरतककी दूरी आठ-आठ गज है। कुण्डका छोर चारों ओरसे उजले रंगके अत्यन्त चमकते हुए

संगमरमर पत्थरसे बना हुआ है। पत्थर इतना चमकदार है कि खड़े होते ही उसपर दर्पणकी भाँति प्रतिबिम्ब पड़ने लगता है। कुण्डकी चारों दिशाओंमें जलमें उतरनेके लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। जल गिरनेके कारण केवल तीन सीढ़ियाँ जलके ऊपर हैं, शेष जलके भीतर हैं। कुण्डके दक्षिणकी ओर जो सीढ़ियाँ हैं, वहीं श्रीप्रिया-प्रियतम कुण्डकी पहली सीढ़ीपर पैर लटकाये उत्तरकी ओर मुख किये विराजमान हैं।

इस सुन्दर कुण्डका जल अत्यन्त निर्मल है। सूर्यकी रश्मियोंमें वह चमचम कर रहा है। कुण्डके जलपर कुछ अन्तरसे कमलके चौड़े-चौड़े पत्ते फैले हुए हैं, जिनपर लाल, उजले एवं नीले रंगके कमल खिल रहे हैं। कमलके पुष्पोंपर गुन-गुन करते हुए भौंरे मँडरा रहे हैं। कुण्डके चारों ओर पीले रंगके चमकते हुए पत्थरसे बनी हुई गोलाकार पाँच हाथ चौड़ी गच है। गचके फिर चारों ओर दस हाथ हरी दूबसे परी हुई भूमि है, जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो हरे रंगका मखमल बिछा दिया गया हो। फिर चारों ओरसे गोलाकार मेंहदीकी झाड़ियाँ लग रही हैं। झाड़ियोंकी चारों दिशाओंमें एक-एक अत्यन्त सुन्दर मेहराबदार द्वार है, जिससे होकर श्रीप्रिया-प्रियतम फव्वारेके पास आया करते हैं। प्रत्येक द्वारके दोनों किनारोंपर दो छोटे-छोटे अशोक-वृक्ष हैं तथा प्रत्येक दो द्वारोंके बीचमें अत्यन्त सुन्दर एक-एक बहुत बड़ा आम्र-वृक्ष है।

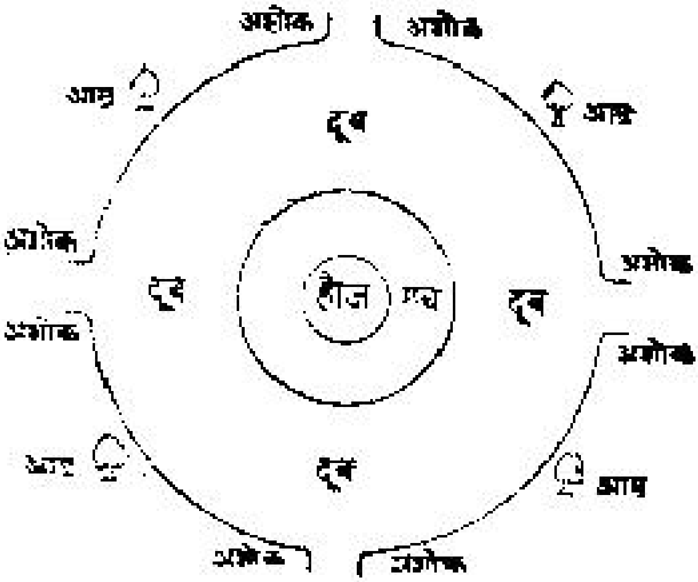

आम्र-वृक्षपर बैठी हुई कोयल 'कुहू-कुहू' रट रही है। चारों ओर आम्र-वृक्ष पीले-पीले बड़े-बड़े फलोंसे लदे हुए हैं, जिनमें कई फलोंपर बैठकर तोते छिद्र बना रहे हैं।

श्रीश्यामसुन्दरकी बायीं ओर श्रीराधा विराजमान हैं। श्रीप्रिया अपना दाहिना हाथ प्यारे श्यामसुन्दरके बायें कंधेपर रखे हुए हैं। दोनोंकी झाँकी सर्वथा अनुपम है। श्रीप्रियाके गोरे गातपर नील रंगकी साड़ी शोभा पा रही है। प्यारे श्यामसुन्दर पीली धोती बाँधे हुए हैं एवं उनके दोनों कंधोंपरसे होती हुई पीली चादर सामनेकी ओर लटक रही है। चादरका एक छोर, जो दाहिने कंधेपरसे लटक रहा है, कुञ्जकी सीढ़ीपर पड़ा हुआ है। प्यारे श्यामसुन्दरके सिरपर फूलोंका बना हुआ मुकुट शोभा पा रहा है। मुकुटमें तीन प्रकारके फूल दिखलायी पड़ रहे हैं। उनमें जूही-फूलोंकी मात्रा अधिक है तथा बीच-बीचमें लाल एवं पीले रंगके छोटे-छोटे सुन्दर अन्य वन्य पुष्प पिरोये हुए हैं। मुकुटके बीचमें अत्यन्त सुन्दर ढंगसे छोटा-सा मयूर-पिच्छ खोंसा हुआ है। श्रीप्रियाके सिरपर भी फूलोंकी बनी हुई अत्यन्त सुन्दर चन्द्रिका है। चन्द्रिकामें जूहीकी लड़ियाँ अर्द्धचन्द्राकार रूपमें लटका दी गयी हैं, जो श्रीप्रियाके लिलारपर झूल रही हैं। श्रीश्यामसुन्दरके लिलारपर केसरकी खौर लगी हुई है एवं श्रीप्रियाके लिलारपर गोल सिंदूर-बिंदु शोभा पा रहा है। श्यामसुन्दरके दोनों कपोलोंपर अलकावलीकी दो लटें झूल रही हैं तथा श्रीप्रियाकी चन्द्रिकाके कुछ नीचे सँवारी हुई केशराशि किंचित् दीख रही है। श्रीप्रियाकी माँग (सिरके मध्य भाग) की दोनों ओर केशराशि लिलारके पास कुछ झुकाकर सँवारी गयी है। प्यारे श्यामसुन्दरकी अलकावली भी आज भ्रू-भागकी ओर कुछ झुकाकर ही सँवारी गयी है। इसीलिये चन्द्रिका एवं मुकुटके नीचेसे वे सँवारे हुए केश दीख पड़ रहे हैं।

श्रीश्यामसुन्दरके दोनों कानोंके नीचेके छिद्रमें चम्पाके फूल खोंसे हुए हैं तथा उन्हींसे सटाकर मल्लिका-पुष्पोंसे निर्मित अत्यन्त सुन्दर मकराकृत कुण्डल सुन्दर ढंगसे सजा दिये गये हैं। श्रीप्रियाके कानमें मल्लिका-पुष्पोंका बना हुआ कर्णफूल शोभा पा रहा है। श्रीश्यामसुन्दरके अत्यन्त सुन्दर नेत्र, कोयोंमें किंचित् तिरछे हुए शोभा पा रहे हैं। उन नेत्रोंसे असीम-अनन्त प्रेम, असीम-अनन्त करुणा, असीम-अनन्त आनन्दका

प्रवाह प्रवाहित हो रहा है। श्रीप्रियाकी आँखोंसे भी प्रेमका झरना झर रहा है।

यद्यपि श्रीप्रियाकी दृष्टि फव्वारेके कुण्डमें तैरती हुई हंसिनीकी ओर है, पर वे क्षण-क्षणमें प्यारे श्यामसुन्दरके मुखारविन्दकी ओर देख लेती हैं। प्रायः प्रियतम श्यामसुन्दरसे दृष्टि मिल जाती है और प्रियाके मुखारविन्दपर बार-बार लज्जाकी छाया उभर आती है। उस समय वे उस लज्जाको छिपानेके लिये अपने मुखारविन्दको हिलाकर पश्चिमकी ओर एक क्षणके लिये घुमा-सी लेती हैं; पर दूसरे ही क्षण श्रीश्यामसुन्दरकी शोभा निहारनेकी ललक अनन्तगुनी बढ़ जाती है और ग्रीवा बरबस उस ओर मुड़ पड़ती है। श्रीश्यामसुन्दरके हलके नीले रंगके तथा श्रीप्रियाके दप-दप करते हुए सुवर्ण रंगके सुन्दर कपोलोंपर एक ऐसी मधुर अरुणिमा दीख पड़ती है मानो किसी अनिर्वचनीय सुन्दर जातिके पाटल पुष्प कपोलोंके अन्तरालमें अभी-अभी विकसित हुए हैं एवं उसीकी अरुणिमा वहाँ चमचम कर रही है। श्रीश्यामसुन्दरके ताम्बूलरञ्जित अधरोंपर वंशी सुशोभित हो रही है एवं श्रीप्रियाके मुखारविन्दपर मन्द-मन्द मुसकान। श्रीप्रिया मानो मुस्करा-मुस्कराकर वंशीसे संकेत कर रही हैं—वंशिके! प्यारे प्रियतम श्यामसुन्दरके होठोंपर बैठी हुई तू मुझे बहुत नचा चुकी है। अब सुन, प्यारे श्यामसुन्दरके सहित तू बंदी बना ली गयी है। देख, एक बार मेरे हृदयके अन्तरालमें देख! अब चारों ओरके कपाट बंद हैं। तू अभी मेरी इच्छासे ही बाहर आयी है, इच्छा करते ही मैं आँख बंद कर लूँगी और फिर तुझे मेरे हृदयमें ही आ जाना पड़ेगा।

श्रीश्यामसुन्दरकी ग्रीवाकी दोनों ओर तथा पीठपर अलकावलीके गुच्छे लटक रहे हैं। श्रीप्रियाकी नीली साड़ीके अन्तरालमें वेणी लहरा रही है। रह-रहकर श्रीप्रियाका अन्तर्हृदय प्रेमसे तरंगित होने लगता है, जिससे सिरका अञ्चल खिसककर पीठपर आ जाता है। उस समय वेणीके ऊपरका भाग किंचित् हिलता हुआ स्पष्ट दीखने लग जाता है। रानीके पीछे चित्रा खड़ी हैं। वे बार-बार अञ्चलको यथास्थान ठीक करती जा रही हैं। प्यारे श्यामसुन्दरके गलेमें जूही-पुष्पोंका बना हुआ मोटा गजरा लटक रहा है। गजरेके बीच-बीचमें हरी-हरी तुलसीकी पत्तियाँ पिरोयी हुई हैं। श्रीप्रियाके गलेमें भी जूही-पुष्पोंका ही गजरा है। श्रीश्यामसुन्दरका

वह गजरा तो पूर्णतः सीधा घुटनोंतक लटक रहा है, पर श्रीप्रियाका गजरा किंचित् तिरछा होकर श्यामसुन्दरकी जाँघके पास उनकी ओर मुड़ा हुआ लटक रहा है ।

श्यामसुन्दरकी दोनों कलाइयोंमें अत्यन्त सुगन्धित छोटे-छोटे पीले रंगके पुष्पोंके ही बने हुए सुन्दर कङ्कण शोभा पा रहे हैं । श्रीप्रियाकी कलाईमें आगे-पीछे फूलोंके बने हुए दो आभूषण हैं । उन दोनों आभूषणोंके बीचमें किसी तैजस धातुकी नीले रंगकी सुन्दर चूड़ियाँ हैं, जिनमें पुष्पोंकी लड़ियाँ इस प्रकार पिरो दी गयी हैं कि चूड़ियोंका नीला रंग बीच-बीचमें दीखता तो है, पर ऐसा प्रतीत होता है कि पीले रंगके फूलोंमें नीले रंगके फूल पिरोकर ही चूड़ियाँ बनायी गयी हैं । प्रिया-प्रियतमके कहुनीके पास बाँहके भागमें फूलोंके ही बने हुए अत्यन्त विचित्र आभूषण शोभा पा रहे हैं । श्यामसुन्दरकी कटिमें धोतीकी फेंट कसी हुई है तथा प्रियाकी नीली साड़ीका अञ्चल कंधेपरसे झूलता हुआ कटिके पास लटक रहा है । श्रीप्रिया उसे कटिमें अटका देनेके उद्देश्यसे कटिके पास बार-बार दबा देती हैं, पर वह रह-रहकर हिल जाता है तथा वहाँसे अञ्चलके छोरके हटते ही सिरपरसे भी वह खिसक जाता है । चित्रा उसे फिर सँभालती है, पर वह फिर खिसक जाता है । ऐसा होनेपर श्यामसुन्दर वंशीको होठोंसे हटाकर निर्मल विशुद्ध हँसी हँस देते हैं । चित्रा भी हँस देती है । तब श्रीप्रिया सरला बालिकाकी भाँति निर्मलतम मधुरतम स्वरमें कई बार पूछ बैठती हैं — री ! हँसती क्यों है ?

श्यामसुन्दरके पगका नूपुर भी चारों ओरसे पीले रंगके फूलोंसे इस प्रकार सजा दिया गया है मानो फूलोंके ही नूपुर हों । श्रीप्रियाकी बिछिया भी वैसे ही फूलोंसे सजी हुई है । इसके अतिरिक्त एड़ी एवं एड़ीके ऊपर गाँठके पास फूलोंकी लड़ियोंके कुछ ऐसे विचित्र आभूषण बनाये गये हैं कि उस कलात्मकताकी उपमा सर्वथा असम्भव है । श्रीप्रिया-प्रियतमके पीछे कुछ मञ्जरियाँ अत्यन्त सुन्दर आमोंको छीलकर उसके खण्ड एक बड़ी परातमें रख रही हैं तथा कुछ मञ्जरियाँ उन स्वर्णाभ खण्डोंको स्वर्ण-पात्रोंमें सजाती जा रही हैं ।

श्रीप्रिया-प्रियतमके सामने कुण्डकी सीढ़ियोंपर ललिता एवं विशाखा कुण्डकी तीसरी सीढ़ीपर पैर टेके हुए बैठी हैं । ललिता-विशाखाकी दृष्टि

इन दोनोंकी ओर है, इसलिये वे आधी लेटी हुई अवस्थामें बैठी हैं। रङ्गदेवी सबसे नीचेवाली सीढ़ीपर बैठी हुई हैं तथा बायें हाथकी केहुनी ललिताके जंघोंपर टिकाये हुए एवं उसी हाथकी हथेलीपर अपने बायें कपोलको टेके हुए श्रीप्रिया-प्रियतमकी शोभा निहार रही हैं। श्यामसुन्दर रह-रहकर वंशीमें कुछ क्षणोंके लिये फूँक भर देते हैं तथा उतने क्षणके लिये एक सुरीली तान समस्त कुञ्जको निनादित कर देती है। वंशीसे स्वर निकलते ही कुण्डके जलमें बड़े-बड़े बुलबुले उठते हैं तथा स्वर बंद होते ही बुलबुले शान्त हो जाते हैं। ऐसा कई बार होते देखकर श्रीप्रिया सरला बालिकाकी तरह खिलखिलाकर हँस पड़ती हैं। सखियाँ भी हँस पड़ती हैं। श्रीप्रिया बड़े ही मधुर स्वरमें श्रीश्यामसुन्दरके कंधोंको हिलाकर कहती हैं--बजा दो न!

श्यामसुन्दर मुस्कुराकर अत्यन्त प्यारभरे स्वरमें कहते हैं— तू कहे सो बजा दूँ।

श्रीप्रिया अत्यन्त प्यारभरी मुद्रामें अपने नयनोंकी पुतलियोंको कोयोंमें नचा देती हैं तथा प्यारे श्यामसुन्दरके बायें कंधेपर अपने दोनों हाथ रखकर बलपूर्वक दबा देती हैं। श्यामसुन्दर अतिशय प्यारभरी दृष्टिसे श्रीप्रियाकी ओर देखते हुए कहते हैं—ना प्रिये! स्पष्ट बताये बिना मैं कैसे समझूँगा? तू बता दे, मैं अभी-अभी बजा देता हूँ!

इस बार श्रीप्रिया प्यारे श्यामसुन्दरके कंधेको अत्यन्त प्यारसे धीरे-धीरे दबाकर उन्हें अपनी ओर झुका लेती हैं तथा बहुत धीरेसे कानमें कुछ कहकर शीघ्र ही अपना मुखारविन्द ललिताकी ओर करके निर्मल हँसी हँसने लग जाती हैं। श्यामसुन्दर कहते हैं—ठीक है, पर प्रिये! इतनी छूट दे दे कि मैं जो गीत चाहूँ, वही गाऊँ।

श्रीप्रिया पहले तो कुछ सकुचा जाती हैं, पर फिर कुछ सावधान-सी होकर लज्जामिश्रित स्वरमें कहती हैं—अच्छी बात है, यही सही!

श्रीश्यामसुन्दरके मुखारविन्दपर प्रसन्नताकी धारा-सी बहने लग जाती है। बात यह हुई थी कि श्रीप्रिया-प्रियतमकी शोभा निहारते-निहारते रङ्गदेवी प्रेममें अधिकाधिक विभोर होती जा रही थीं। श्यामसुन्दर

बार-बार वंशीमें सुर भरते थे। सुर भरते ही कुण्डके जलमें बुलबुले उठने लगते थे। रङ्गदेवीकी दृष्टि एक बार बुलबुलेकी ओर गयी। रङ्गदेवीने सोचा—ओह ! कुञ्जका अणु-अणु प्यारे श्यामसुन्दरके अनुरागमें नाच रहा है। ये जलकण भी प्यारे श्यामसुन्दरका स्पर्श चाह रहे हैं तो प्यारेसे कहूँ कि ये झुककर अपने चरण बढ़ा दें। पर ना, प्यारे श्यामसुन्दरको नहीं उठाऊँगी। तब क्या करूँ ? अच्छा, ये जलकण ही उठकर प्यारेके पास जा पहुँचें।

रङ्गदेवी यह सोचती जा रही थी तथा अधिकाधिक प्रेममें विभोर होती जा रही थी। सखियोंका हृदय श्रीप्रियाके हृदयसे सर्वथा जुड़ा होता है। इसलिये श्रीप्रियाके हृदयमें रङ्गदेवीकी भावना प्रतिबिम्बित हो गयी। श्रीप्रियाने प्यारे श्यामसुन्दरको संकेत कर दिया—प्रियतम ! वंशीमें ऐसा सुर भरो कि कुण्डका समस्त जल बढ़कर हम सबको सर्वथा डुबा दे।

श्रीप्रियाकी इच्छा ही श्यामसुन्दरकी इच्छा है एवं श्यामसुन्दरकी इच्छा ही श्रीप्रियाकी इच्छा है। यद्यपि श्रीप्रिया समझ जाती हैं कि प्यारे श्यामसुन्दर मेरे सम्बन्धमें ही गीत गायेंगे, पर मेरे प्रियतमको मेरा गुण गानेसे सुख मिलेगा, इसलिये अपने सामने ही अपना गुण गानेके लिये प्यारे श्यामसुन्दरको सम्मति दे देती हैं। अस्तु, श्रीप्रियाकी आज्ञा पाते ही श्यामसुन्दर फूँक भरने लगते हैं तथा अत्यन्त मधुरतम स्वरमें वंशीके छिद्रोंसे यह ध्वनि निकलने लग जाती है—

माखन सो मन दूध सो जोबन है दधि ते अधिकै उर ईठी।
जा छबि आगे छपाकर छाछ समेत सुधा बसुधा सब सीठी॥
नैनन नेह चुवै कवि देव बुझावति बैन बियोग अँगीठी।
ऐसी रसीली अहीरी अहो कहौ क्यों न लगै मन मोहनै मीठी॥

ध्वनिके आरम्भ होते ही कुण्डके जलमें बड़े-बड़े बुलबुले उठते हैं। फिर स्वर-लहरीके साथ कुण्डका जल बड़ी शीघ्रतासे बढ़ता है तथा तरंगित होने लगता है मानो स्वर-लहरीके साथ जल नाच रहा हो। जैसे ही वंशीसे यह ध्वनि निकली कि 'क्यों न लगै मन मोहनै मीठी', बस, कुण्डका जल अकस्मात् इतना अधिक एवं इतना ऊँचा बढ़ जाता है

कि एक क्षणके लिये मेंड़दोके समस्त घेरेमें चारों ओर चार-चार हाथ ऊँचा जल बह जाता है। श्रीप्रिया-प्रियतम सखियोंके साथ एक क्षणके लिये उसमें डूब जाते हैं, फिर दूसरे ही क्षण जल कुण्डकी सीमामें जा पहुँचता है। श्रीप्रिया-प्रियतम एवं सखियोंके सब वस्त्र भीग जाते हैं एवं सभी आनन्दमें झूमने लग जाती हैं कुञ्जके विविध पक्षी यह दृश्य देखकर वृक्षोंकी डालियोंपरसे ही उच्च स्वरसे बोल उठते हैं—जय हो श्रीप्रिया-प्रियतमकी ! जय हो ! जय हो !!

झूलन लीला

झूलत नागरि नागर लाल।
मंद मंद सब सखी झुलावति गावत गीत रसाल॥
फरहराति पट पीत नील के अंचल चंचल चाल।
मनहुँ परस्पर उमँगि ध्यान छबि प्रगट भई तिहिं काल॥
सिलसिलाति अति प्रिया सीस ते लटकति बेनी नाल।
जनु पिय मुकुट बरहि भ्रम बस तहँ ब्याली बिकल बिहाल॥
मल्ली माल प्रिया के उर की पिय तुलसी दल माल।
जनु सुरसरि रबि तनया मिलि कै सोभित श्रेनि मराल॥
स्यामल गौर परस्पर प्रति छबि सोभा बिसद बिसाल।
निरखि गदाधर कुँवरि कुँवर को मन परयौ रस जंजाल॥

निकुञ्जकी हरी-हरी दूबको देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो हरे मखमलका गद्दा बिछाया हुआ है। उसीपर बहुत बड़ा अत्यन्त हरा-भरा कदम्बका पेड़ है। इसकी एक मोटी डाल उत्तरकी ओर फैली हुई है। उसीमें झूला डला हुआ है। झूलेको फूलोंसे इस प्रकार सजा दिया गया है कि केवल फूल-ही-फूल दिखायी पड़ रहे हैं। जिस डोरीके सहारे झूला कदम्बसे लटक रहा है, उस डोरीके चारों ओर श्वेत कमल गूँथ दिये जानेसे ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो कमलके फूलोंकी डोरीसे झूला लटकाया हुआ है। झूला हंसके आकारका है। उसे भी कमलसे इस प्रकार सजा दिया गया है मानो कमलके फूलोंका एक हंस है और वह कमलके फूलोंकी दो डोरियोंपर अपना पंख फैलाकर झूल रहा है। उसी कमलके फूलोंवाले हंसकी पीठपर (झूलेके बीचमें) एक हाथ ऊँचा, एक हाथ चौड़ा एवं दो हाथ लंबा उजले कमलके फूलोंका एक आसन है तथा उसमें सहारा देनेके लिये दोनों ओर हत्थे लगे हुए हैं। पीछे पीठकी ओर भी सहारा देनेके लिये करीब छः अंगुल चौड़ा एवं दो हाथ लंबा एक डंडा

लगा है। यह भी उजले कमलके फूलोंसे भली प्रकार गुँथा हुआ है। उसे जहाँसे भी देखा जाये, केवल खिले हुए कमलके फूल ही दिखलायी देते हैं।

इसीपर दक्षिणकी ओर श्रीकृष्ण एवं उत्तरकी ओर श्रीराधारानी बैठी हैं। राधारानीका दाहिना हाथ श्रीकृष्णके कंधेपर है एवं बायाँ हाथ आसनके हत्थेपर। श्रीकृष्ण दोनों हाथोंसे वंशी बजा रहे हैं। सखियोंका एक बहुत बड़ा झुण्ड झूलेके पूर्वकी ओर तथा एक पश्चिमकी ओर खड़ा है। सखियाँ आनन्दमें डूबी हुई हैं तथा अत्यन्त मधुर स्वरमें गाती हुई झूलेको धीरे-धीरे पूर्वसे पश्चिमकी ओरकी गतिसे हिला रही हैं। झूला झूलता हुआ जब पूर्वकी ओर आता है तो पूर्वकी ओरकी सखियाँ उसे स्पर्श करके थोड़ा पश्चिमकी ओर ठेल देती हैं तथा जब पश्चिमकी ओर आता है, तब पश्चिमकी ओरकी सखियाँ उसे स्पर्श करके पूर्वकी ओर ठेल देती हैं। पश्चिमकी ओरकी सखियोंको ऐसा प्रतीत हो रहा है कि झूलेका मुँह पश्चिमकी ओर है तथा राधारानी एवं श्रीकृष्ण पश्चिमकी ओर मुँह किये हुए बैठे हैं। पूर्वकी ओरकी सखियोंको ऐसा प्रतीत हो रहा है कि श्रीराधा एवं श्रीकृष्ण पूर्वकी ओर मुँह किये बैठे हैं।

झूलेकी गति तो पूर्व-पश्चिमकी है, पर उस समय जो पवन बह रहा है, इसकी गति उत्तरसे दक्षिणकी ओर होनेसे झूलेके पासकी वायुकी गति अनिश्चित हो गयी है। उसी वायुके झकोरेसे श्रीकृष्णके कंधेपर जो पीताम्बरकी चादर है, उसका एक छोर फर-फर करता हुआ उड़ रहा है एवं श्रीप्रियाका नीला अञ्चल भी फर-फर करता हुआ उड़ रहा है। श्रीकृष्णके दोनों हाथ वंशीके छिद्रपर लगे रहनेके कारण चादर निर्बाध उड़ रही है। श्रीप्रिया बार-बार अपने अञ्चलको बायें हाथसे सँभालती हैं, पर उनके सँभालनेपर भी वह फिर उड़ जाता है। जब सखियाँ झूलेको बहुत झटकेसे ठेलने लगती हैं, उस समय पीताम्बर एवं नीला अञ्चल, दोनों अत्यधिक फरफराने लगते हैं तथा उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो श्रीप्रियाके हृदयमें श्यामसुन्दरकी जो छवि निरन्तर रहती है तथा श्यामसुन्दरके हृदयमें श्रीप्रियाकी जो छवि सदा-सर्वदा रहती है, वे दोनों छवियाँ पीताम्बर एवं नीलाम्बर (नीले अञ्चल) के रूपमें प्रकट होकर श्रीकृष्ण एवं श्रीराधाके साथ झूला झूल रही हों। श्यामसुन्दरकी घुँघराली अलकावली वायुके झकोरोंसे हिल रही है। इसी समय वायुके वेगके कारण

श्रीप्रियाके सिरसे अञ्चल खिसककर पीठपर आ जाता है। श्रीप्रिया चाहती हैं कि अञ्चलको यथास्थान कर दूँ; पर झूलेका वेग बढ़ जानेके कारण वे गिरनेके भयसे श्यामसुन्दरके बायें कंधेको दोनों हाथोंसे पकड़ लेती हैं। झूलेकी गतिके साथ अब प्रियाजीकी वेणी भी स्पष्ट रूपसे झूलती हुई दीख रही है। उस चञ्चल वेणीको देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो काली नागिन श्रीप्रियाकी पीठपर लटकी हुई हो; पर वहीं पासमें श्यामसुन्दरके मोर-मुकुटको देखकर उसे वहाँ मयूरका भ्रम हो रहा हो और वह उसके डरसे व्याकुल होकर श्रीप्रियाकी पीठपर रेंग रही हो। श्यामसुन्दरके मुकुटका मोर-पंख भी वायुमें फर-फर कर रहा है। श्रीप्रियाके द्वारा बायाँ कंधा पकड़ लिये जानेके कारण वे बायीं ओर कुछ झुक-से गये हैं। श्रीश्यामसुन्दरके गलेमें तुलसीकी माला है तथा श्रीप्रियाके गलेमें चमेलीके फूलोंकी माला है। इस बार वायुके झोंकेसे उड़कर वे दोनों (तुलसी एवं चमेलीके फूलोंकी) मालाएँ आपसमें उलझ गयी हैं। अब झूलेकी गति और भी तीव्र हो गयी है। इसी समय उन उलझी हुई मालाओंपर श्रीप्रियाके गलेकी मोती-माला आकर उलझ जाती है। इन तीन मालाओंके उलझ जानेसे ऐसी शोभा हो रही है मानो चमेली-फूलकी मालारूपी गङ्गाजीमें तुलसी-मालारूपी यमुनाजी आकर मिली हों तथा मोतीकी माला मानो हंसोंकी पंक्ति हो।

इस प्रकार गोरी श्रीराधा एवं श्यामसुन्दरकी छवि हिंडोलेके झकोरेसे प्रतिक्षण नित्य नूतन होती जा रही है।

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

नौका विहार लीला

हंसके आकारकी उजली छः नावें श्रीराधाकुण्डके चमकते हुए जलपर तैर रही हैं। नावके बीचमें पीले रंगकी रेशमी गद्दीसे जड़ा हुआ एक सिंहासन है। वह सिंहासन ऐसा है कि बैठे-ही-बैठे इच्छानुसार पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण किसी भी दिशाकी ओर उसका मुँह किया जा सकता है। छः नावोंपर सखियाँ चढ़ी हुई हैं। श्रीराधा एवं श्रीकृष्ण भी चढ़े हुए हैं; पर प्रत्येक नावकी सखियोंको यही अनुभव हो रहा है कि मैं तो श्रीराधा एवं श्रीकृष्णकी नावपर ही चढ़ी हुई हूँ। नाव टेढ़ी-मेढ़ी घूमती हुई पूर्वकी ओर बह रही है। दो सखियाँ नावकी डाँड खे रही हैं।

नावके मुँहवाले सिरेके पास श्रीकृष्ण दक्षिणकी ओर मुँह किये हुए खड़े हैं। उनके पास ही श्रीप्रिया हाथमें सोनेका कटोरा लेकर दक्षिणकी ओर मुँह किये खड़ी हैं। राधाकुण्डके पूर्व एवं दक्षिणके कोनेसे कुछ हंस बड़े सुन्दर ढंगसे कलरव करते हुए जलमें तैरते हुए नावोंकी ओर बढ़ रहे हैं। आकाशमें मेघ छाये हुए हैं। रिमझिम-रिमझिम शब्द करती हुई कुछ वर्षा हो रही है। राधाकुण्डके जलपर पानीकी बूँदोंके गिरनेसे बुलबुले उठ रहे हैं। राधारानीके निकट रूपमञ्जरी हाथमें सोनेकी बड़ी झारी लटकाये खड़ी है। झारीमें दूध भरा हुआ है।

अब नावके पास हंस पहुँच जाते हैं। हंसोंके पास पहुँचते ही श्रीकृष्ण बैठ जाते हैं। उनके बैठते ही राधारानी भी बैठ जाती हैं। राधारानीके हाथमें जो कटोरा है, उसमें रूपमञ्जरी दूध भर देती है। राधारानी उसे श्रीकृष्णके हाथमें देकर बायें हाथसे श्रीकृष्णका कंधा पकड़ लेती हैं एवं दाहिने हाथको नीचे टेककर हंसोंकी ओर देखने लगती हैं। हंस आनन्दमें मग्न हुआ अपनी चोंचको श्रीकृष्णके कटोरेमें डालकर दूध पीता है। एक बार थोड़ा पीकर फिर उठाता है तथा

मधुर कलरव करके फिर पीने लगता है। इस प्रकार बार-बार थोड़ा-थोड़ा पीकर सिर उठाता है। राधारानी छोटी सरला बालिकाके समान हंसका दूध पीना देखकर बीच-बीचमें खिलखिलाकर हँस पड़ती हैं। हंसोंके बारी-बारीसे दूध पीनेके बाद जब हंसिनी पीनेके लिये आती है तो श्रीकृष्ण बायें हाथसे राधारानीके दाहिने कपोलको धीरेसे स्पर्श करके कहते हैं—अब तू पिला।

राधारानी कटोरेको हाथमें ले लेती हैं तथा हंसिनीको संकेत करके कहती हैं—हंसिनी! इधर आ। मैं तुम्हें प्यारे श्यामसुन्दरके अधरामृतका पान कराती हूँ।

हंसिनीको ऐसा कहनेके बाद राधारानी पीछे मुड़कर विशाखाको कुछ संकेत करती हैं। विशाखा एक दूसरे कटोरेमें दूध भरकर राधारानीके हाथोंमें पकड़ा देती हैं। राधारानी पहलेवाला कटोरा नावपर रख देती हैं तथा दूसरे कटोरेको श्रीकृष्णके होठोंकी ओर बढ़ाती हुई कहती हैं—अब थोड़ा तुम्हें पीना पड़ेगा, नहीं तो मैं झूठी हो जाऊँगी। मैंने हंसिनीको तुम्हारे अधरामृत-पान करानेका निमन्त्रण दिया है।

श्रीकृष्ण कटोरेको पकड़कर थोड़ा पीनेके लिये जैसे ही मुँह बढ़ाते हैं कि वैसे ही मधुमङ्गल घाटपर आ पहुँचता है तथा पुकार करके कहता है — अरे कान्हूँ! ठहरना, ठहरना।

ठहरनेके लिये कहकर मधुमङ्गल पानीमें छपाकसे कूद पड़ता है। श्रीकृष्ण उसे लानेके लिये एक नावपरकी सखियोंको संकेत करते हैं; पर मधुमङ्गल तीव्र गतिसे तैरता हुआ चला आता है तथा श्रीकृष्णकी नावपर तुरंत चढ़कर हँसता हुआ कहता है—अरे, तुमने मुझे अच्छा ठगा था, पर मैं ठीक समयपर आ गया। दूधका कटोरा चल रहा है; पर सुन लो मेरी बात, दूध पीना मत। आज षष्ठी है। षष्ठी देवीकी पूजा माँ यशोदा करेंगी। उन्होंने कहा है कि श्रीकृष्णको आज पूजा होनेके पहले दूध नहीं पीना चाहिये।

श्रीकृष्ण कटोरा रखकर मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए कहते हैं — राधे! अब तो कैसे पीऊँ?

विशाखा हाथमें एक रूमाल उठा लेती है। एक बड़ी परातमें सूँड़िया-मिठाई भरकर नावमें ही रखी थी। विशाखा उस मिठाईमेंसे थोड़ा-सा रूमालमें बाँधकर मधुमङ्गलके हाथमें पकड़ा देती है तथा कहती है — मधुमङ्गल! तू तो ब्राह्मणका लड़का है। शास्त्र तुमने पढ़े ही हैं। तू ही कोई उपाय बता कि जिससे श्रीकृष्ण दूध पी सकें; क्योंकि वे नहीं पीयेंगे तो हमारी सखी राधारानीकी बात झूठी हो जायेगी। राधाने हंसिनीको श्रीकृष्णके अधरामृत-प्रसाद पानेके लिये निमन्त्रित किया है।

मधुमङ्गल आँखें बंद करके कुछ क्षण सोचता है तथा फिर कहता है—एक उपाय तो है। स्त्रीके शरीरमें षष्ठी देवीका निवास है। इसलिये यदि राधा पहले पी ले तथा उसमेंसे फिर श्रीकृष्ण पीयें तो व्रतका नियम नहीं टूटेगा; क्योंकि वह दूध प्रसाद हो जायेगा।

मधुमङ्गलकी बात सुनकर श्रीकृष्ण कहते हैं—प्रिये! अब लो, यदि तुम्हें हंसिनीको दूध पिलानेकी इच्छा हो तो पहले तुम्हें पीना पड़ेगा। नहीं तो, मैं यदि पहले पीऊँगा तो यह मधुमङ्गल बड़ा पाजी है, मैयासे जाकर कह देगा और मैया अप्रसन्न होगी।

राधारानी मुस्कराती हुई विचारने लगती हैं कि मैं तो अच्छी फँस गयी। राधारानी सोच ही रही थीं कि वर्षा होने लग जाती है और वर्षाका जल दूधके कटोरेमें भी आकर गिरने लगता है। श्रीकृष्ण मुस्कराते हुए कहते हैं—देखो, अब देरी मत करो! यदि तुम्हें हंसिनीको दूध पिलाना हो तो स्वयं पी लो, फिर मैं भी पी लूँ। नहीं पिलाना हो तो नाव आगे बढ़ाऊँ।

हंसिनियोंकी मण्डली उसी समय सिर उठा-उठाकर बड़े सुन्दर ढंगसे इस प्रकारकी मुद्रा बनाती है मानो राधारानीसे प्रार्थना कर रही है—श्रीकृष्णप्रियतमे! हमें अपने दोनोंका अधरामृत पिलाकर ही नाव आगे बढ़ाना।

श्रीराधा कुछ सकुचायी-सी होकर अपना मुँह पश्चिमकी ओर करके कटोरेके दूधको अपने होठोंसे किंचित् छू देती हैं। छूते ही श्रीकृष्ण कटोरेको ले लेते हैं। वे दो-तीन घूँट पी जाते हैं तथा कहते हैं—बेचारे

हंस तो यों ही रह गये। इन्हें तो तुम्हारा प्रसाद मिला ही नहीं। एक कटोरा और प्रसाद बना दो तो फिर हंस भी पी लें।

केवल संकेतकी देर थी कि विमलामञ्जरीने एक और कटोरा भरकर राधाके होठोंसे लगा दिया। इस कटोरेसे भी श्रीकृष्ण एक-दो घूँट पी लेते हैं। अब एक कटोरेमें श्रीराधा हंसिनीको एवं दूसरे कटोरेमें श्रीकृष्ण हंसको दूध पिलाते हैं। हंस-हंसिनी आनन्दमें डूबकर पंख फुला-फुलाकर दूध पीते हैं।

इधर मधुमङ्गल विशाखाके दिये हुए बूँदियोंको थोड़ा चखता है तथा श्रीकृष्णसे कहता है—अरे कान्हूँ भइया! ऐसी बढ़िया बूँदिया है कि क्या बताऊँ? थोड़ा तुम भी खाओ।

बूँदिया खिलानेके लिये मधुमङ्गल श्रीकृष्णके मुँहके सामने रूमालको अपनी अञ्जलिमें भरकर रख देता है। श्रीकृष्ण दाहिने हाथमें कटोरा पकड़े हुए थे एवं बायें हाथसे हंसोंके सिरपर हाथ फेरते जा रहे थे। अतः उन्होंने कहा—तुम्हीं थोड़ा खिला दो।

मधुमङ्गल बायें हाथमें रूमालको झोलीके रूपमें बनाकर टाँग लेता है तथा दाहिने हाथसे बूँदिया निकालकर श्रीकृष्णके मुँहमें देता है। श्रीकृष्ण धीरे-धीरे पाँच-सात दाने खाते हैं। इधर वर्षा कभी अधिक और कभी धीमी होती ही रही है, जिससे श्रीकृष्णका पीताम्बर एवं श्रीराधारानी तथा सखियोंकी नीली साड़ी सर्वथा भीग गयी हैं। वर्षाके जलकी धारा लिलारपरसे बह-बहकर श्रीकृष्ण, श्रीराधा एवं सखियोंके कपोलोंपर आ रही है।

हंस जब दूध पी चुकते हैं, तब मधुमङ्गल रूमालवाले बूँदियोंको परातमें डाल देता है तथा विशाखासे कहता है—तू बड़ी धूर्त है। मुझे थोड़ेसे बूँदिये देकर ठगने आयी है। मैं ठगानेका नहीं! अभी-अभी तेरे कुञ्जमें जाकर देखता हूँ कि आज कौन-कौनसे नये फल लगे हैं। तू चाहती है कि मैं इन बूँदियोंमें भूलकर तुम्हारे कुञ्जमें जाना भूल जाऊँ। क्यों यही बात है न?

सखियाँ हँसती हैं। मधुमङ्गल धड़ामसे पानीमें कूदकर तैरने लगता

है। तैरते हुए उत्तर-पूर्व दिशामें विशाखाके कुञ्जकी ओर बढ़ने लगता है तथा श्रीकृष्णकी नाव पूर्वकी ओर चलने लगती है। नावका मुँह पूर्वकी ओर होते ही बत्तक-पक्षियोंका एक झुण्ड 'कों-कों' करता हुआ बहुत शीघ्रतासे नावकी ओर बढ़ता है। श्रीकृष्ण खड़े होकर पूर्वकी ओर मुख करके उन्हीं पक्षियोंको देखने लग जाते हैं। श्रीराधा भी उनकी दाहिनी ओर खड़ी होकर पक्षियोंको देखती हैं। नाव कुछ ही आगे बढ़ी थी कि बत्तक-पक्षियोंका झुण्ड वहाँ आ जाता है। श्रीकृष्ण नावके मुखको उत्तरकी ओर करनेका संकेत करते हैं। दाहिनी ओरवाली सखी डाँड़को दबाकर नावको उधर ही घुमा देती है। श्रीकृष्ण एवं श्रीराधा बड़े प्यारसे बत्तक-पक्षियोंको छू-छूकर उनका स्वागत करते हैं। लवङ्गमञ्जरी बुँदियोंवाली परातको पीछेसे लाकर राधा एवं श्रीकृष्णके बीच रख देती है। श्रीराधा श्रीकृष्णके हाथमें अपनी अञ्जलियोंसे भर-भरकर बुँदिया देती हैं। श्रीकृष्ण अपनी अञ्जलिको आगे बढ़ाते हैं तथा बत्तक उनकी अञ्जलिमें चोंच डालकर बुँदिये खाते हैं। एक बत्तक उछलकर नावपर चढ़ जाता है। राधारानी हँसती हुई, पर कुछ डरी-सी होकर श्रीकृष्णके पीछे जाकर उनका कंधा पकड़ लेती है। बत्तक बड़े प्यारकी मुद्रा बनाकर अपना सिर कभी नीचे करता है, कभी ऊपर उठाता है तथा बीच-बीचमें बोलता जाता है। श्रीकृष्ण हँसते हुए अपना सिर दाहिनी ओर घुमाते हैं। फिर ऊपर उठाकर राधासे मुस्कुराते हुए कहते हैं—मैं समझ रहा हूँ कि तू बत्तकसे डर गयी है। क्यों, मैं ठीक कह रहा हूँ न?

राधारानी लजायी-सी होकर कहती हैं—नहीं, डरूँगी क्यों? देखो, मैं अभी इस बत्तकको खिलाती हूँ।

राधारानी अपने दाहिने हाथकी अञ्जलिमें बुँदिये भरकर बत्तकको खिलाने लगती हैं। नावपर जो बत्तक था, वह खाने लगता है। उसे खाते देखकर पाँच-सात बत्तक एक साथ ही नावपर चढ़ जाते हैं तथा राधारानीके हाथोंमें चोंच डालकर बुँदिया खाना चाहते हैं। राधारानी बुँदियोंको नावपर गिरा देती हैं तथा तुरंत उठकर श्रीकृष्णका कंधा पकड़कर हँसने लगती हैं

श्रीकृष्ण खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं तथा कहते हैं—मैंने कहा

था न कि तुझे डर लगता है; पर तू अपना डर छिपानेके लिये साहस करके गयी थी। कहो, भाग क्यों आयी ?

राधारानी मुस्कुराती हुई खड़ी रह जाती हैं। फिर बैठकर श्रीकृष्णके कानोंमें कुछ कहती हैं। श्रीकृष्ण 'ठीक है' कहकर बत्तकको खिलाने लग जाते हैं।

ललिता उसी समय पीछेसे आकर श्रीकृष्णके पीताम्बरके एक छोरको खींचकर उसे पहले निचोड़ती हैं; क्योंकि वह वर्षाके कारण पूर्णतः भीग गया था। उसे निचोड़कर उसमें थोड़े बूँदिये बाँध देती हैं। शेष बूँदियोंको कमलके पत्तोंके दोनोंमें भर-भरकर श्रीकृष्णके हाथमें देती जाती हैं। वहीं चार-पाँच सखियाँ नीचेसे कमलके पत्तोंको तोड़-तोड़कर और दोने बना-बनाकर ललिताको देती जा रही हैं। श्रीकृष्ण बूँदियोंसे भरे दोनोंको पानीमें छोड़ते जाते हैं। वे दोनोंको जैसे ही पानीपर छोड़ते हैं कि बड़ी-बड़ी मछलियाँ उन्हें उलट देती हैं तथा बूँदिये बिखरकर पानीमें गिर पड़ते हैं और मछलियाँ इन्हें खाती हैं। इस प्रकार हंस, बत्तक एवं मछलियोंको खिलानेके बाद श्रीकृष्ण उठकर खड़े हो जाते हैं तथा नावको फिर पूर्वकी ओर घुमानेका संकेत करते हैं।

अब अत्यधिक वर्षा होने लगती है। पानीकी बड़ी-बड़ी बूँदें नावपर एवं राधाकुण्डके जलपर गिरने लगती हैं। आकाशमें और भी घने मेघ छा जाते हैं तथा ऐसा ढंग हो जाता है कि लगातार अब कुछ देरतक वर्षा होगी। अतः श्रीकृष्ण, श्रीराधा एवं सखियोंमें इस बातका विचार होने लगता है कि नावसे उतरकर कुञ्जमें चलें या इसी वर्षामें नाव चलानेकी होड़ लगाकर खेलें। श्रीराधा श्यामसुन्दरसे कहती हैं—लक्षण ऐसे हैं कि वर्षा तो बहुत अधिक होगी और देरतक होगी, इसलिये कुञ्जमें चले चलें।

तभी ललिता कहती हैं—श्यामसुन्दर आज खेलते तो मैं देखती कि तुम हारते हो या मैं हारती हूँ।

श्यामसुन्दर खुलकर हँसते हुए कहते हैं—ठीक। चल, चल। आज

मैं तेरे फंदेमें आनेका नहीं। तू चाहती है कि कलवाले दाँवको सस्ते-सस्ते चुका दूँ; पर यह होनेका नहीं।

ललिता मुस्कुराती है; नावकी डाँडपर स्वयं बैठकर खेने लग जाती है तथा कहती है—नहीं जो, मैं ऐसी-वैसी नहीं हूँ कि तुम्हें धोखा देकर दाँव चुका दूँ। मैं तो चाहती हूँ कि कुछ देर नाव चलाकर देख लो। आज पानीमें मैं तुम्हें हराकर दिखाऊँ।

श्रीकृष्ण—तो कलका दाँव इसमें नहीं गिना जायेगा।

ललिता—नहीं, सर्वथा नहीं।

श्रीकृष्ण—तब क्या हानि है? चल, देख।

फिर श्रीकृष्ण स्वयं डाँडको पकड़ लेते हैं। ललिता डाँड चलाना छोड़कर दूसरी-दूसरी नावोंपर जो सखियाँ हैं, उन्हें कुछ संकेत करती हैं। संकेत पाते ही सब नावें तुरंत घूमकर पूर्वकी ओर मुँह करके एक पंक्तिमें खड़ी हो जाती हैं। खेल आरम्भ होनेका संकेत देनेके लिये तथा खेलमें हार-जीतका निर्णय करनेके लिये श्रीकृष्णके द्वारा रूपमञ्जरी चुनी जाती है और खेल प्रारम्भ हो जाता है।

॥ श्रीजयतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

दीपावली लीला

अपने भवनकी अटारीकी सबसे ऊपरकी छतपर श्रीराधारानी आकाशदीपकी रेशमी डोरीको अपने हाथमें पकड़े हुए दक्षिणकी ओर मुख किये खड़ी हैं। आज दीपावली है, इसलिये समस्त नन्द-व्रजमें संध्याके समय विशेष चहल-पहल है। प्रत्येक छतकी अटारीपर व्रज-सुन्दरियोंकी टोली खड़ी है। राधारानी भी आकाशदीप प्रज्वलित करने जा रही हैं। वे यद्यपि डोरी पकड़े हुए दक्षिणकी ओर मुख किये खड़ी हैं, पर कुछ ही क्षणके अन्तरसे अपने पीछेकी ओर बार-बार दृष्टि डालती हुई नन्दबाबाकी गोशालाकी ओर देखने लग जाती हैं। आज अभीतक समय हो जानेपर भी श्यामसुन्दर गोशालामें गाय दुहने नहीं आये हैं, अतः रानी बड़ी उत्सुकतासे उधर ही बार-बार श्यामसुन्दरके आनेकी बाट देख रही हैं।

छतपर चारों ओर घेरा लगा हुआ है। पश्चिमी ओरके घेरेसे बँधे हुए मणि-जटित स्तम्भपर आकाशदीप लटक रहा है। उसे नीचे उतारनेके लिये नीले रेशमकी डोरी उस दीपदानीसे (जिसके ऊपर आकाशदीप रखा रहता है, उससे) जोड़कर लटका दी गयी है। रानी उसी डोरीके सहारे धीरे-धीरे उस दीपदानीको नीचे उतार रही हैं। दीपदानी एक विचित्र प्रकारके शीशेकी बनी हुई है, जिसमेंसे भीतरके दीपकका प्रकाश अनन्तगुना होकर प्रकाशित होता है। दीपदानीके ऊपर नीले रंगका पत्थर जड़ा हुआ है। रानी सोनेके दीपमें घी भरकर उसमें कपासकी बत्ती भिगोती हैं। ललिताके हाथमें धूपबत्ती-जैसी कोई बहुत मोटी सुगन्धित वर्त्तिका है, जो धीमी-धीमी जल रही है तथा धूएँके समान उसमेंसे पीले रंगकी अग्निशिखा प्रकट हो रही है। उस शिखासे अत्यन्त विलक्षण सुगन्धि निकल रही है, जिससे सारी छत सुवासित हो गयी है। रानी उस अग्निशिखासे घी-भरे प्रदीपको सटा देती हैं। प्रदीप जल जाता है। रानी उसे हाथमें लेकर उसी दीपदानीमें रख देती हैं। रूपमञ्जरीके हाथमें जलकी झारी है, उससे रानी हाथ धोती हैं। गुणमञ्जरीके हाथमें फूलोंसे भरी थाली है, उसमेंसे चार-पाँच

सुन्दर गुलाबके फूलोंको लेकर रानी उस दीपके चारों ओर रख देती हैं। रानी यह कर भी रही हैं तथा बार-बार नन्दबाबाकी गोशालाकी ओर देख भी लेती हैं। अभीतक श्यामसुन्दर गोशालामें नहीं आये हैं।

प्रदीप तैयार हो जानेपर रानी उस दीपककी परिक्रमा करती हैं तथा मन-ही-मन कहती हैं—आकाशके अधिष्ठातृ देवता! मेरे मनकी दशा देखकर मेरा अपराध क्षमा कर दें। देव! मैं दीपक भी ठीकसे नहीं जला सकी हूँ। क्या करूँ, सर्वथा असमर्थ हो गयी हूँ। मैं चाहती हूँ कि दीपकी बत्ती ठीकसे बनाकर आपको दीप-दान करती, दीप-दान करके प्रियतम श्यामसुन्दरके मङ्गलकी भीख माँगती, पर ऐसा कर नहीं पाती। दीपक हाथमें लेती हूँ, पर वहाँ उस दीपकके स्थानपर मुझे श्यामसुन्दर दीखने लग जाते हैं। कपासकी बत्ती हाथमें लेती हूँ, हाथपर रखते ही हाथोंमें श्यामसुन्दरकी छवि दीखने लग जाती है। दीपदानीपर दृष्टि डालती हूँ, पर मुझे दीपदानी नहीं दीखती, वहाँ श्यामसुन्दर दीखते हैं। डोरीको पकड़कर मैं खींचना चाहती हूँ, उस डोरीमें ही मेरे प्रियतम मुझे हँसते हुए दीखने लग जाते हैं। मैं सोचती हूँ कि ललिताको पुकारूँ और पुकारकर कहूँ कि बहिन! मेरी ओरसे तू पूजा कर दे; पर ललिताके स्थानपर श्यामसुन्दरको पुकारने लग जाती हूँ। कहना कुछ चाहिये, कह कुछ जाती हूँ। इसीलिये हे देव! आप रुष्ट न हों। मेरी इस विधिहीन पूजासे ही आप प्रसन्न हो जायँ और एक भीख दें। देव! श्यामसुन्दरकी दासी यह राधा आपसे भीख माँगती है कि मेरे प्रियतम श्यामसुन्दर अनन्त कालतक सुखी रहें।

प्रार्थना करते-करते रानी भावाविष्ट हो जाती हैं तथा आकाशमें एवं अपने चारों ओर—पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण—सर्वत्र उन्हें श्यामसुन्दर दीखने लग जाते हैं। हाथमें डोरीको पकड़े हुए पार्थिव पुत्तलिकाकी भाँति वे खड़ी रह जाती हैं। ललिता स्थिति समझ जाती है तथा डोरीको उनके हाथसे छुड़ाकर चित्राके हाथमें दे देती है। पासमें ही घेरेसे सटा हुआ जो एक मखमली आसन है, उसपर वे रानीको बैठा देती हैं।

कुछ देर बाद रानीको बाह्य ज्ञान होता है तथा वे पुनः उसी गोशालाकी ओर देखने लग जाती हैं। इस समय कुन्दवल्ली छतपर आती है। उसे अचानक आयी देखकर रानीको आश्चर्य होता है। कुन्दवल्ली रानीके

कंधोंको पकड़कर प्यारसे उसके सिरको चूमकर कहती है—चल, तुझे मैयाने अभी-अभी शीघ्र बुलाया है।

रानीके मुखारविन्दपर उत्कण्ठा एवं आनन्दके चिह्न प्रकट हो जाते हैं। फिर अत्यन्त धीमे स्वरमें किंचित् भयमिश्रित मुद्रासे वे पूछती हैं—आज्ञा मिल गयी है?

कुन्दवल्ली हँसकर कहती है—हाँ-हाँ, सब विधि-विधान पूरा करके ही आयी हूँ।

यह सुनते ही रानीकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं रहती। वे बड़ी शीघ्रतासे छतकी सीढ़ियोंसे उतरती हैं तथा उतरकर भवनके पश्चिमी उपवनमें आ पहुँचती हैं। रानीके पीछे कुन्दवल्ली, ललिता आदि दौड़ती-सी चल रही हैं। रूपमञ्जरी एक नीले रंगकी चादर लेनेके लिये पीछे लौट पड़ती है तथा शीघ्र ही चादर लेकर दौड़ती हुई पुनः राधारानीके पास पहुँच जाती है। रानी उत्कण्ठावश इतनी शीघ्रतासे चल रही हैं कि इतनी देरमें ही वे उपवनके द्वारको पार करके मुख्य मार्गपर आ गयी हैं। इसी समय रूपमञ्जरी पीछेसे आकर उनपर चादर डाल देती है। चादरको लपेटती हुई रानी नन्द-भवनकी ओर शीघ्रतासे बढ़ने लगती हैं।

यद्यपि मणियोंके अत्यधिक प्रकाशसे समस्त मार्गपर दिनका-सा उजाला हो रहा है, फिर भी दीपावलीका दिन होनेके कारण सोनेके प्रदीप स्थान-स्थानपर जलाये गये हैं। नन्द-भवनके मुख्य द्वारपर गोप-गोपियोंकी भीड़-सी लग रही है। आज श्यामसुन्दर स्वयं दीपक जला-जलाकर मार्ग एवं भवनको सजा रहे हैं। श्यामसुन्दरकी विलक्षण शोभा है। उनकी अलकावली अत्यन्त सुन्दर ढंगसे सँवार दी गयी है तथा उनके केशके गुच्छ पीछे ग्रीवापर लटक रहे हैं। वे अत्यन्त सुन्दर फूलोंका बना हुआ मुकुट, जिसके आगे एक मोरपंख लगा है, सिरपर बाँधे हुए हैं। पीली चादर दोनों कंधोंपरसे होती हुई सामनेकी ओर लटक रही है। वे रेशमी लाल किनारीवाली पीली धोती पहने हुए हैं और उसका एक छोर कमरमें कसी हुई फेंटसे निकलकर आगे लटक रहा है। श्यामसुन्दरकी बायीं ओर मधुमङ्गल हाथमें घीसे भरी झारी लेकर

घूमता हुआ चल रहा है। सुबलने बहुतसे दीपकोंसे भरी सोनेकी परात उठा रखी है। श्रीदाम कपासकी बत्तियोंका पुलिंदा लिये हुए श्यामसुन्दरके पीछे-पीछे चल रहा है। उधर मैया एक बार भवनके भीतर जाती हैं, दूसरे ही क्षण बाहर आकर घबरायी-सी उधर देखने लग जाती हैं, जिधर श्यामसुन्दर दीपक जलाते हुए घूम रहे हैं और बार-बार चिल्लाकर कहती हैं—अरे ओ मधुमङ्गल! अरे सुबल!! देखना भला, कहीं श्यामसुन्दरका हाथ न जल जाये।

मैया कभी धनिष्ठासे कहती हैं—धनिष्ठके! जाओ! उनसे (व्रजेश्वर नन्दसे) कह दे कि वे गोशालासे तुरंत आ जायँ। श्यामसुन्दरके पीछे-पीछे चलकर उसे सँभालें, कहीं वह हाथ नहीं जला ले।

कभी श्यामसुन्दरके पास दौड़कर चली जाती हैं तथा कहती हैं—मेरे लाल! अब नहीं। अब बहुत दीपक तुमने जला दिये हैं, अब रहने दे।

श्यामसुन्दर बड़े प्रेमसे कहते हैं—ना मैया! मेरा हाथ नहीं जलेगा। देख, अबतक आठ सौसे अधिक दीपक जला चुका हूँ। एक बार भी तो हाथ नहीं जला।

मैया फिर भी मधुमङ्गलको सावधान करती हुई कुछ दूर हटकर भवनके द्वारके पास आकर उधर ही देखने लग जाती हैं। जहाँ श्यामसुन्दर आँखोंसे ओझल हुए, तभी मैया चिल्लाती हुई कहने लग जाती हैं कि अब बस, अब और नहीं जलाने दूँगी एवं उसके पास दौड़ने लग जाती हैं।

इसी समय राधारानी नन्द-भवनके द्वारपर आ पहुँचती हैं। राधारानीको देखते ही मैया आनन्दमें डूबने लग जाती हैं। वे रानीके पास दौड़ जाती हैं। रानी पैरोंपर गिरकर प्रणाम करना चाहती हैं, पर मैया उसके पहले ही उन्हें हृदयसे चिपका लेती हैं। उसके सिरको सूँघती हैं, चूमती हैं। फिर मैया यशोदा बड़ी प्रफुल्लताकी मुद्रामें कहती हैं—कुन्दवल्ली! जा, बहिन रोहिणीसे कह दे, मेरी लाडिली राधा आ गयी है। बस, अब तो एक क्षणमें ही सब हो जायेगा। हाँ, हाँ, रोहिणी बहिन ऊपर रसोईघरमें है। जाकर कह दे।

श्यामसुन्दर दीपक जला रहे थे। उसी समय उनके कानोंमें 'राधा आ गयी है'—ये शब्द पड़ते हैं। 'राधा' सुनते ही श्यामसुन्दरके हाथसे दीपक गिर जाता है। वे उस स्थानसे दौड़ते हुए वहाँ ही आ जाते हैं, जहाँ मैया रानीको लेकर खड़ी हैं। श्यामसुन्दर एवं रानी एक-दूसरेको देखते ही प्रेममें अधीर होने लगते हैं।

श्यामसुन्दरको आया देखकर मैया रानीके पाससे चलकर श्यामसुन्दरके पास आ जाती हैं तथा अञ्चलसे श्यामसुन्दरका मुख पोंछने लगती हैं। श्यामसुन्दर कहते हैं—ना मैया! अब दीपक नहीं जलाऊँगा। तेरी बात मैंने नहीं सुनी। अभी एक दीपक हाथसे गिर गया। मैं बच गया, नहीं तो सचमुच हाथ जल जाता।

मैया श्यामसुन्दरको हृदयसे लगाकर प्यार करने लगती हैं। फिर कहती हैं—मधुमङ्गल भैया! इसे लेकर तुरंत चला जा। तुम एवं सुबल श्यामसुन्दरके कपड़े बदला करके ऊपर पूजा-गृहमें इसे शीघ्र ले आओ! देर मत करना भला! महर्षि शाण्डिल्य आने ही वाले हैं।

मैया श्यामसुन्दरके सिरको पुनः सूँघती हैं तथा कहती हैं—जा मेरे लाल! तुरंत कपड़े बदल करके ऊपर आ जा!

श्यामसुन्दर मैयाके भुजपाशसे निकलकर रानीकी ओर देखते हुए उत्तरकी ओर धीरे-धीरे बढ़ते हैं। मैया रानीका हाथ पकड़ लेती हैं एवं कहती हैं--मेरी लाडिली बेटी! ऊपर चल, मैं तुझे सब समझा दूँ।

रानी मैयाके साथ ऊपर पाकशालामें जा पहुँचती हैं तथा छिपी दृष्टिसे उधर देखने लगती हैं, जिधर श्यामसुन्दर गये हैं। रसोईघरमें मैया रोहिणी बैठी हुई परातमें मिहीदानेके लड्डू बाँध रही हैं। रानी उनके चरणोंमें जाकर प्रणाम करती हैं। क्या बनाना है और क्या-क्या बन चुका है, यह सब मैया रानीको समझाती हैं और कहती हैं कि शेष सब बातें बहिन रोहिणी बता देंगी। इतना बतला करके मैया श्यामसुन्दरको लानेके लिये नीचे दौड़ जाती हैं।

रानी एवं रानीकी सभी सखियाँ-मञ्जरियाँ अत्यधिक तत्परतासे पाक-कार्यमें लग जाती हैं। कुछ ही देरमें आश्चर्यजनक रीतिसे सब कुछ बन

जाता है। परातमें भर-भरकर भाँति-भाँतिकी मिठाइयाँ नन्दरानीकी दासियाँ एवं राधारानीकी मञ्जरियाँ लाकर सामनेके पूजागृहमें रखती चली जाती हैं। पूजागृहके दक्षिणकी ओरका स्थान मिठाईकी परातोंसे भर जाता है। पूजागृहके बीचमें अत्यन्त सुन्दर-सुकोमल आसन चारों ओरसे बिछाये हुए हैं। ठीक मध्यभागमें छोटी सोनेकी चौकी सजाकर रखी हुई है। चौकीपर एक हाथ ऊँचा और आधा हाथ चौड़ा मणिजटित सिंहासन रखा है, जिसपर अत्यन्त सुन्दर किसी तैजस् धातुकी बनी हुई श्रीलक्ष्मीनारायणजीकी प्रतिमा विराज रही है। चौकीके नीचे अर्घ्य आदि पूजाके उपकरण रखे हुए हैं। कुछ दूरपर हवन-वेदी शोभा पा रही है। आचार्य महर्षि शाण्डिल्यके बैठनेके लिये पासमें ही सुन्दर गद्दी सुशोभित हो रही है। उनके शिष्योंके बैठनेके लिये भी सुन्दर-सुन्दर आसन लगे हुए हैं।

इसी समय महर्षि शाण्डिल्य अपने शिष्योंसहित पधारते हैं। उनके पधारते ही सभी विनयपूर्वक किनारे हट-हटकर खड़े हो जाते हैं। मैया यशोदा इसी समय वहाँ आ जाती हैं। वे दूरसे ही महर्षिके चरणोंमें प्रणाम करती हैं। महर्षि आशीर्वाद देते हैं। सुन्दर पगड़ी बाँधे नन्दबाबा भी वहीं आ पहुँचते हैं। वे महर्षिके चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम करते हैं। महर्षि उन्हें आशीर्वाद देते हैं। मैया यशोदा कहती हैं—कुन्द! जा, कृष्णको शीघ्र बुला ला! मेरा नाम लेकर बुला ला!।

मैया यह कह ही रही थी कि श्यामसुन्दर आ जाते हैं। आगे-आगे मधुमङ्गल है, बीचमें श्यामसुन्दर, उनके पीछे सुबल एवं अन्यान्य सखा। मैया दौड़कर श्यामसुन्दरको हृदयसे चिपटा लेती हैं। फिर बड़े प्यारसे हाथ पकड़कर महर्षिके सामने ले आती हैं। श्यामसुन्दर महर्षि शाण्डिल्यके चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम करते हैं। महर्षिकी आँखोंमें आँसू भर आते हैं। वे अतिशय शीघ्रतासे श्यामसुन्दरको उठाकर हृदयसे लगा लेते हैं। मधुमङ्गल आदि सखा भी महर्षिको प्रणाम करते हैं। महर्षि उन्हें भी उठा-उठाकर हृदयसे लगाते हैं। श्यामसुन्दर अतिशय प्यारसे महर्षिके साथ आये हुए पाँच शिष्योंसे गले मिलते हैं। वे ब्राह्मण-कुमार आनन्दमें पागल-से हो जाते हैं। फिर

श्यामसुन्दर एक तिरछी चितवन रसोईघरकी ओर डालते हैं। अपनी प्रियतमा राधारानीके साथ दृष्टि मिलते ही श्यामसुन्दरका सारा शरीर काँप जाता है। यही दशा रानीकी भी रसोईघरमें होती है। श्यामसुन्दरकी यह दशा देखकर नन्दबाबा एवं मैया कुछ घबरा-सी जाती हैं, परन्तु फिर श्यामसुन्दरको हँसते देखकर सभी निश्चिन्त हो जाते हैं।

स्वस्तिवाचनपूर्वक श्रीलक्ष्मीनारायणजीकी चौंसठ उपचारोंसे विधिवत् पूजा होती है। पूजक नन्दबाबा हैं, पर श्यामसुन्दर उनके पासमें बैठे हुए नन्दबाबाके हाथमें पूजाकी सामग्री पकड़ाते जा रहे हैं। बड़े ही सुन्दर ढंगसे पूजा होती है। रानी सखियोंके बीचमें बैठी हुई अपने प्रियतमकी शोभा एकटक निहारती रहती हैं। पूजा समाप्त होते ही वहाँ देवर्षि नारद अत्यन्त मधुर स्वरमें श्रीगान करते हुए आते हैं—

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ १ ॥
वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम् ।
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ २ ॥
वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरः पाणिर्मधुरः पादौ मधुरौ ।
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ३ ॥
गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ४ ॥
करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं रमणं मधुरम् ।
वमितं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ५ ॥
गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीची मधुरा ।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ६ ॥
गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं मुक्तं मधुरम् ।
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ७ ॥
गोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा ।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥ ८ ॥

देवर्षिको श्यामसुन्दर तथा नन्दबाबा आदि सभी साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं। देवर्षि श्यामसुन्दरको गले लगाते हैं, फिर महर्षि शाण्डिल्यसे गले मिलते हैं। नन्दबाबा अतिशय सत्कारपूर्वक महर्षि शाण्डिल्यको

दक्षिणा देते हैं। महर्षिके शिष्य दक्षिणा सँभालते हैं। फिर महर्षि श्यामसुन्दरकी ओर कुछ देरतक एकटक देखकर प्रस्थान करते हैं। देवर्षि नारद भी दर्शन करके प्रस्थान करते हैं।

अब नन्द-उपनन्दकी पंक्तियोंके बीचमें श्यामसुन्दर सखाओंके साथ भोजन करने बैठते हैं। राधारानीकी सखियाँ, नन्दरानीकी दासियाँ एवं स्वयं नन्दरानी परोसनेका कार्य कर रही हैं। भीतर बैठी हुई रानी भोज्य सामग्रियोंको सजा-सजाकर परातमें भर देती हैं। सखियाँ परातको बाहर ले जाकर परोसती हैं। बड़े ही आनन्द-समारोहके साथ भोजन समाप्त हो जाता है। भोजन समाप्त होनेपर नन्दबाबा श्यामसुन्दर एवं दाऊजीका हाथ पकड़े हुए राजसभामें स्वजनोंसे मिलने चले जाते हैं। मैया राधारानीको खिलानेके लिये परातमें बहुत-सी मिठाइयाँ स्वयं भरकर लाती हैं तथा बड़े प्यारसे रानीके मुखमें देना चाहती हैं। रानी संकोच कर रही हैं। ललिता कहती हैं—मैया ! हमलोग खा लेंगी। आप निश्चिन्त रहें।

ललिताकी बात सुनकर मैया पुनः ललितासे कहती हैं देखना भला, तुमलोग यदि कोई भी बिना खाये जाओगी तो मैं बहुत कष्ट होऊँगी।

इसके बाद मैया तुरंत ही श्यामसुन्दरको देखनेके लिये राजसभाकी ओर दौड़ पड़ती हैं। उनके चले जानेपर सखियाँ, उस परातको उठा लाती हैं, जिसमें श्यामसुन्दरने भोजन किया था ! उन सबने बड़ी चतुराईसे पंक्ति उठते ही उस परातको उठाकर छिपा दिया था। उसी परातकी मिठाईमें वे मैयाके दिये हुए परातकी मिठाई सजा-सजाकर रख देती हैं। रानी सखियोंसहित श्यामसुन्दरके अधरामृतका प्रसाद लेती हैं। प्रसाद लेना समाप्त करके, हाथ-मुँह धोकर और श्यामसुन्दरके पीकमिश्रित पानके बीड़ेको मुखमें लेकर वे सब घर वापस लौटनेवाली ही थीं कि मैया यशोदा उसी समय आ जाती हैं। रानीको जानेके लिये प्रस्तुत देखकर वे धनिष्ठाको कुछ संकेत करती हैं। धनिष्ठा संकेत समझ जाती है और हीरेकी, बनी हुई अत्यन्त सुन्दर अँगूठी लाकर मैयाके हाथमें पकड़ा देती है। मैया उसे रानीकी अँगुलीमें पहना देती हैं एवं कहती हैं—बेटी ! मेरा यह आशीर्वाद अस्वीकार मत करना। देख, इसे मैंने कृष्णके लिये बनवायी थी, पर

कुछ ढीली होनेके कारण वह निकाल-निकालकर फेंक देता है। आज प्रातःकाल तेरी अँगुलियोंमें वैसी अँगूठी देखकर मैंने सोचा कि विधाताने यह अँगूठी तेरे लिये ही बनवायी है, इसलिये मैंने पहना दी मेरी लाडिली बेटी! माँके इस आशीर्वादको तू ग्रहण कर ले।

रानी सिर झुका लेती है तथा मैयाके चरणोंमें गिरकर प्रणाम करती है। मैया फिर रानीको हृदयसे लगा लेती है। मैया यशोदाकी आँखोंमें आँसू भर आते हैं। वे रानीकी ठोड़ीको पकड़कर चूमने लग जाती है तथा कहती है—मेरी लाडिली! तुझे देखकर प्रायः मुझे भ्रम हो जाता है कि कृष्ण कहीं सुबलको ही साड़ी पहनाकर खेल तो नहीं कर रहा है? फिर पास आनेपर तुम्हारे गोरे रंगको देखकर पहचान पाती हूँ। ओह! विधाताने तुम दोनोंके मुखको कैसा एक-सा ही बनाया है?

नन्दरानीकी बात सुनकर राधारानी सकुचा जाती है। मैया रानीको पकड़े हुए मुख्य द्वारतक आती है। द्वारके पास जाकर ललिता कुछ रुक-सी जाती है। उसी समय मधुमङ्गल वहाँ आ पहुँचता है एवं ललितासे कहता है—री! आज चलकर देख, मैंने राजसभामें कैसी दीपावली सजायी है। तुझे तो सौ-सौ जन्ममें भी वैसा सजाना नहीं आयेगा।

मधुमङ्गलकी बात सुनकर सभी हँस पड़ती है। इसपर मधुमङ्गल कहता है—हँसती है? अच्छा! चल, चलकर देख ले, फिर समझ जायेगी कि यह झूठ कह रहा है या सच।

ललिता हँसकर कहती है—तेरे जैसे बंदरकी सजायी हुई दीपावली भला अच्छी क्यों न होगी?

मधुमङ्गल हँसकर कहता है—देख, तू विश्वास नहीं करती। सचमुच कान्हूँ और हम दोनोंने मिलकर ऐसी दीपावली सजायी है कि देखते ही बन पड़ता है।

मधुमङ्गलकी बात सुनकर ललिता राधारानीकी ओर अँगुलीसे संकेत करती हुई कहती है—इसे देर हो जायेगी, नहीं तो मैं देख आती।

मधुमङ्गल कहता है— जब इतनी देर हुई तो थोड़ी और सही। इसे भी साथ ले चल, यह भी देख लेगी।

रानीके हृदयमें तो आन्तरिक इच्छा है कि चलकर देख आऊँ, पर बाहरसे ऐसी मुद्रा बनाती हैं मानो बहुत देर हो गयी है, अतः घर वापस लौट चलना चाहिये; किन्तु मधुमङ्गलका आग्रह देखकर मैया कहती हैं—बेटी! इस मधुमङ्गलको भी मैं बहुत अधिक प्यार करती हूँ। यह दिन-रात मेरे कृष्णकी सँभाल रखता है। मैं तेरा आभार मानूँगी, यदि तू इसकी सजायी हुई दीपावलीको जाकर थोड़ी देर देख लेगी। इसका चित्त प्रसन्न हो जायेगा।

मैयाके ऐसा कहते ही सखी-मण्डलीके सहित रानी राजसभाकी ओर चल पड़ती हैं। वहाँ पहुँचकर रानी एक खम्भेकी आड़से देखने लगती हैं। रानीकी दृष्टि सीधे श्यामसुन्दरपर जाकर टिक जाती है। मधुमङ्गल पासमें ही खड़ा है। वह उच्च स्वरमें बोलता है—वहाँ देख, बाबाकी गद्दीके पासकी सजावट देख।

मधुमङ्गलका उच्च स्वर श्यामसुन्दरके कानोंमें पड़ता है। वे इधर देखने लग जाते हैं। दृष्टि फेरते ही राधारानीसे आँखें मिल जाती हैं। पत्थरकी मूर्तिकी तरह कुछ क्षणके लिये दोनोंकी दृष्टि स्थिर हो जाती है। फिर दोनों सँभल जाते हैं एवं मुस्कुराने लगते हैं।

रानी कुछ देर इधर-उधर देखकर फिर सखियोंके साथ घरकी ओर चल पड़ती हैं। मैया चाहती हैं कि कुछ दूरतक मैं पहुँचानेके लिये चलूँ, पर रानी हाथ जोड़कर रोक देती हैं।

मैया लौट आती हैं। रानी मुख्य मार्गसे चलती हुई फिर यमुना तटके पथसे अपने घरपर चली जाती हैं तथा आकर बिछौनेपर धमसे गिर पड़ती हैं। ललिता रानीके सिरको गोदमें लेकर पंखा झलने लगती है।

योगिनी लीला

(स्थान है—बरसानेका सरोवर। समय है—सायंकाल। संध्या होनेमें दो घंटेकी देर है। संध्याकालीन सूर्यकी किरणें सरोवरके जलपर पड़ रही हैं। सरोवरका जल झलमल-झलमल कर रहा है। मणिमय सुन्दर घाटपर गोपियाँ अपने कलसोंमें जल भर रही हैं। कुछ जल भरकर लौट रही हैं और कुछ जल भरनेके लिये आ रही हैं। वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा अपने पार्श्वमें सोनेका कलसा दबाये मन्द-मन्द गतिसे आ रही है। दाहिनी ओर श्रीललिता और बायीं ओर श्रीविशाखा हैं। दोनों ही श्रीराधाकी भाँति अपने-अपने पार्श्वमें सोनेका कलसा लिये हुए हैं। श्रीराधाके पीछे और भी सखियाँ कलसा लिये हुए हैं। श्रीराधा चलती हैं, फिर रुक जाती हैं, फिर चलती हैं, इस प्रकार रुकती-चलती हुई घाटपर आकर खड़ी हो जाती हैं। घाटसे कुछ दूर हटकर पश्चिमकी ओर कुछ भीड़ लग रही है। कुछ ग्वाल-बाल एवं सिरपर कलसे रखे हुई कुछ गोपियाँ गोलाकार खड़ी हैं। श्रीराधाकी दृष्टि उस ओर जाती है।)

राधा—(कौतूहलभरे स्वरमें) **ललिते! देखकर आ, यह कैसी भीड़ है?**

(ललिता जाती है, कुछ देर वहाँ ठहरकर फिर दौड़कर वापस आती है। समूचा शरीर पसीनेसे लथपथ हो जाता है।)

ललिता—क्या बताऊँ राधे? राधे! तू चल, अरे! क्या बताऊँ?

राधा—क्यों, क्या बात है?

ललिता—राधे! क्या बताऊँ? (कलेजेपर हाथ रखकर) **एक ऐसी सुन्दर योगिनी आयी है, इतनी सुन्दर कि बस, देखते ही रह जाओ। ऐसा मन करता है**… … …

राधा—(कुछ अनमनी-सी होकर) तो ?

ललिता—(राधाका हाथ पकड़कर) तनिक चल तो सही। कलसे पैकर भर लेंगे।

(श्रीललिता राधाका हाथ पकड़े भीड़के पास आती हैं। भीड़की गोपियाँ श्रीवृषभानु राजाकी लाडिलीको खड़ी देखकर सामनेसे हटकर उन्हें आगे स्थान दे देती हैं। श्रीराधा-ललिता आदि अब भीड़के बीचमें आ जाती हैं और देखती हैं कि सरोवरके घाटकी नवसे ऊपरकी सीढ़ीपर बैठी हुई एक योगिनी अत्यन्त मधुर स्वरमें गा रही है। तानपूरेके स्वरमें स्वर मिलाकर अचेत-सी होकर गा रही है। योगिनीकी आँखें मुँदी हुई हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो योगिनी समाधिस्थ होने जा रही है। योगिनी साँवली है। आयु चौदह वर्षकी है, ललाटपर विभूति रमा रखी है, पर विभूतिके अन्तरालसे अनोखा लावण्य, अनुपम सौन्दर्य झर रहा है।)

योगिनी—(तानपूरेपर गाते हुए)

पिया तोहि नैनन ही में राखूँ।

तेरे एक रोम की छबि पर अगत वार सब नाखूँ॥

(श्रीराधा काठकी पुतली-सी खड़ी रहकर पद सुनती हैं।)

योगिनी—(तानपूरेपर बार-बार दोहराते हुए)

नैनन ही में राखूँ, पिया तोहि नैनन ही में राखूँ।

(मानो पुनः चेतनता हो आयी हो, ऐसी मुद्रा धारण करके श्रीराधा भीड़से बाहर निकल आती हैं तथा कुछ दूरपर घाटपर लगी हुई मेंहदीकी झाड़ियोंसे सटकर बैठ जाती हैं; पर दृष्टि योगिनीकी ओर लगी है। ललिता-विशाखा आदि भी वहीं आकर बैठ जाती हैं।)

राधा—(भराये हुए स्वरमें) ललिते! यह योगिनी होकर ऐसा भजन क्यों गाती है?

ललिता—कैसा भजन?

राधा—(कुछ खीझी-सी होकर) अरे! क्या सुन नहीं रही है?

ललिता—(कुछ मुस्कुराकर) अब समझी।

राधा—तो बता! क्यों गाती है? सचमुच ललिते! तू ही देख। इतना रूप, ऐसा सौन्दर्य, उसपर ऐसा भजन! योग कैसे निभेगा?

योगिनी—(अत्यन्त मधुर स्वरमें आलाप भरती हुई)
पिय तोहि नैनन ही में राखूँ।

(श्रीराधा फिर अन्यमनस्क-सी होकर एक बार ललिताकी ओर देखती हैं।)

ललिता—(कुछ हँसती हुई) तू तो भोली है। अरे! इसे निर्गुण भजन कहते हैं। बैरागी साधु गाया करते हैं।

योगिनी—(उच्च स्वरसे गाते हुए।)
भेई सकल अंग साँवल रँग, हाँ···आ···आ···आ···

(श्रीराधाके मुखपर पसीनेके बिंदु झलकने लगते हैं। सारा शरीर काँप जाता है। ललिता उन्हें पकड़ लेती हैं।)

ललिता—(आँचलसे श्रीराधाके मुखको पोंछती हुई अत्यन्त प्रेमभरे स्वरमें) बावली सखी! इस योगिनीका साँवला तुम्हारा श्यामसुन्दर नहीं है। योगिनी 'पिया', 'साँवल' कह-कहकर 'पिया', 'साँवल' के गीत गा-गाकर अपने ब्रह्मकी ज्योतिका ध्यान करती है। समझी?

(श्रीराधा चुपचाप भजन सुनती हैं। थोड़ी देर बाद योगिनीका भजन समाप्त हो जाता है। तानपूरा धीरेसे कंधेपर रखकर आँखें मूँदे हुए इस प्रकारसे बैठ जाती है मानो समाधिस्थ हो गयी हो।)

राधा—ललिते! पता नहीं क्यों, योगिनी मुझे बड़ी प्यारी लग रही है। इसकी ओर मेरा मन बरबस खिंचता चला जा रहा है। तू पूछ तो सही कि यह कहाँ रहती है?

ललिता—(हँसकर) क्यों, योगिनी बनेगी क्या?

राधा—ललिते! तू विनोद करती है और मेरा मन ··· ··· ···

ललिता—(अत्यन्त प्यारसे) रुष्ट मत होओ, अभी पता लगाती हूँ।

(ललिता योगिनीके पास जाती है तथा हाथ जोड़कर घुटने टेककर योगिनीके चरणोंमें प्रणाम करती है। योगिनीकी आँखें खुल जाती है तथा 'अलख-अलख' कहकर योगिनी गम्भीर साँस लेती है।)

ललिता—(बड़ी विनयसे) योगिनी मैया! कहाँ रहती हो?

योगिनी—अलख! अलख!! तू जानकर क्या करेगी?

ललिता—मेरी एक सखी है, उसकी तुम्हारे ऊपर बड़ी भक्ति हो गयी है, इसलिये वह जानना चाहती है।

योगिनी—उसको आवश्यकता होगी तो अपने-आप पूछ लेगी। हूँ!

ललिता—उसे लज्जा लगती है, इसलिये मुझे भेजा है।

योगिनी—अलख! अलख!! मैं कहाँ आ फँसी?

(योगिनी आँखें मूँद लेती है। ललिता कुछ देरतक प्रतीक्षा करती है, पर आँखें नहीं खोलनेपर श्रीराधाके पास चली जाती है। श्रीराधा एकटक योगिनीको देखती है।)

राधा—अच्छा, देख! मैं पता लगाती हूँ।

(श्रीराधा योगिनीके पास जाती है। अब भीड़ कम हो जानेसे श्रीराधाकी सखियाँ एवं दो-तीन अन्य गोपियाँ बच रहती हैं।)

राधा—(कुछ क्रोधभरे एवं उपेक्षाभरे स्वरमें) री योगिनी! तू कहाँसे आयी है? आँखोंमें भरा है राग और स्वाँग पहन लिया है वैराग्यका! योग निभनेका नहीं है।

(योगिनी आँखें खोलकर देखने लग जाती है।)

राधा—हुँ, आयु है थोड़ी, मन है कच्चा, और उसपर तूने पाया है यह अनुपम रूप, फिर ऐसा स्वाँग क्यों लिया?

(योगिनी 'अलख-अलख' कहने लगती है।)

राधा—सच कहती हूँ, तुम्हारी आँखें कहती हैं कि तुम्हारे मनमें कुछ चाह है। भोगकी चाह और वेष वैराग्य का! क्या कहना है?

(योगिनी 'अलख-अलख' उच्च स्वरसे पुकार उठती है।)

राधा—(उपेक्षाके स्वरमें) योगिनी! अभी कुछ भी बिगड़ा नहीं है। चल मेरे साथ राजभवनमें और सच बता दे कि तू क्या चाहती है।

(योगिनी 'अलख-अलख' कहती हुई ठट्ठा मारकर हँस पड़ती है। उधर चित्रा धीरेसे राधाको पकड़कर कुछ दूर ठेल देती है।)

चित्रा—(राधाके कानके पास मुँह ले जाकर उसे और बोलनेके लिये मना करके, फिर योगिनीसे) योगिनी मैया ! मेरी यह सखी बड़ी चञ्चल है, पर हृदयकी बड़ी सरल है। बुरा मत मानना मैया !

योगिनी—(हँसती हुई) अलख ! अलख !! हूँ, वृषभानु राजाकी लाडिली है। भला, मनमें अभिमान क्यों न रहे ! राजपुत्री है, इसीलिये योगिनीकी परीक्षा लेती है, योगिनीसे विनोद करती है, योगिनीको भोगका लालच देती है, हूँ ····।

(श्रीराधा हँसती हुई योगिनीके पास फिर चली जाती है और पासमें बैठकर अत्यन्त प्रेमसे उसके एक हाथको पकड़ लेती हैं। योगिनी एक बार काँप जाती है।)

राधा—(हँसकर) योगिनी ! तू रुष्ट हो गयी क्या ?

योगिनी—अलख ! अलख !! योगिनी भी कहीं रुष्ट होती है ?

राधा—(साहसभरे स्वरमें) योगिनी ! सचमुच तू मुझे बड़ी प्यारी लग रही है, इसलिये विनोद कर बैठी।

योगिनी—(हँसकर) अलख ! अलख !! विनोद करनेसे तुझे सुख मिला, फिर और क्या चाहिये ?

राधा—(उत्साहभरे स्वरमें) तू मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करेगी ?

योगिनी—बोलो !

राधा—(आशाभरे स्वरमें) तू मेरे साथ मेरे राजभवनमें चल।

(योगिनी ठट्ठा मारकर हँस पड़ती है।)

राधा—क्यों, हँसी क्यों ?

योगिनी—अलख ! अलख !! तू हँसनेकी बात करे तो मैं हँसूँ नहीं ?

राधा—क्यों, मेरे राजभवन चलनेमें क्या कोई पाप है ?

योगिनी—(अत्यधिक हँसती हुई) अलख ! अलख !! भला तू ठहरी राजपुत्री और मैं हूँ योगिनी, मेरा-तेरा क्या सम्बन्ध ? हा···हा···हा···।

राधा—(उदास-सी होकर) देख, साँझ हो चली है, तू कहीं भी तो रात बितायेगी ही ?

योगिनी—रात तो बिताऊँगी ही, पर वनमें ! राजभवनमें क्यों जाऊँ ?

(ललिता योगिनीके पास जाकर बैठ जाती है।)

ललिता—योगिनी मैया ! मैंने सुना है कि भगवान् भक्तोंकी चाह रखते हैं। तुम योगिनी हो, भगवान्में मिल चुकी हो, फिर तुम्हें भी तो मेरी सखीकी प्रार्थना सुननी ही चाहिये।

योगिनी—अलख ! अलख !! तुमलोग भोली हो। देखो, मैं योगिनी हूँ। मुझे आसन स्थिर करना है, मनका संयम करना है, इसीलिये वन-फल खाकर प्राण धारण करना है। मैंने संसार छोड़ दिया है और और तुम कहती हो कि राजभवनमें चलो। भला ! ऐसी भी प्रार्थना मानी जाती है ?

राधा—योगिनी ! क्यों झूठ-मूठ बातें बनाती है ? अच्छा, सच बता, क्या कभी तू राजभवनमें नहीं ठहरी है ?

योगिनी—(कुछ गम्भीर होकर) ठहरी क्यों नहीं हूँ, बहुत बार ठहरी हूँ।

राधा—तो कुछ दिन मेरे यहाँ भी ठहरनेमें तेरा क्या बिगड़ जायेगा ?

योगिनी—अलख ! अलख !! क्या बताऊँ ?

राधा—(प्रेमसे हाथको फिर पकड़कर) हाँ-हाँ, निःसंकोच बता दे, क्यों नहीं चलना चाहती ?

योगिनी—अलख ! अलख !! कहाँ आकर फँस गयी ?

राधा—योगिनी ! मेरा हृदय तुम्हें देखकर उमड़ा आ रहा है। तुम्हें मेरी शपथ, चलनेमें जो अड़चन हो, वह बता दे, मैं दूर कर दूँगी।

योगिनी—अलख ! अलख !!

राधा—तुम्हें बताना पड़ेगा, आज बिना बताये मैं तुमको छोड़नेवाली नहीं हूँ।

योगिनी—(हँसकर धीरे-धीरे गुनगुनाती हुई)

भोजन भूखा हौं नहीं मन न भावना और।
प्रीति सहित आदर जहाँ हम निवसैं तिहि ठौर॥

राधा—(आशाभरे स्वरमें) तो एक बार चल वहाँ। अनादर हो तो लौट आना।

योगिनी—अलख ! अलख !! कहाँ आकर फँस गयी ?

राधा—(ललिताको आँखोंके संकेतद्वारा योगिनीकी बाँह पकड़नेके लिये कहकर) बस, अब तो नहीं छोड़ूँगी। आज रात-रातके लिये तो तुम्हें ले ही जाऊँगी।

(ललिता योगिनीकी बाँह पकड़ लेती है। योगिनी ऐसी मुद्रा बनाती है मानो वह बहुत असमञ्जसमें पड़ गयी हो; किंतु तुरंत हाथ छुड़ा कर कहने लगती है।)

योगिनी—देखो, तुम लोग समझती नहीं। इस प्रकार हमारी साधना चौपट करोगी क्या ?

राधा—चल, चल ! साधनाकी बातें बनाती हो ? साधनाकी आड़में बहकाना चाहती हो ? मैं तेरी सब बातें समझ रही हूँ।

योगिनी—देखो, वृषभानुलाडिली ! आज नहीं, कल। वचन देती हूँ, कल आऊँगी।

राधा—मैं तो छोड़नेकी नहीं। पता नहीं, तू भाग जायेगी तो ! कलका क्या भरोसा ?

योगिनी—वचन देकर नहीं भागूँगी।

(श्रीराधा उदास-सी हो जाती है। निराशाभरे स्वरमें ललिताके कानमें कुछ कहकर बैठ जाती है।)

ललिता—योगिनी मैया ! तुम्हारा हृदय इतना कठोर क्यों है ? भगवान्‌को पानेके बाद भी क्या साधना करनी पड़ती है ? क्यों हमलोगोंकी वञ्चना करती हो ?

योगिनी—(कुछ लजायी-सी होकर) देखो, तुमलोग अभी बच्ची हो। सब बातें समझ ही नहीं सकती।

राधा—(उदास-सी होकर) समझती नहीं, ठीक, पर यह ठीक जानती हूँ कि इस समय तुम केवल बड़ी-बड़ी बातें बना रही हो।

योगिनी—(श्रीराधाको प्रसन्न करनेकी मुद्रामें) वृषभानुलाडिली ! देखो, खीझो मत ! हम योगिनियोंको लोक-संग्रह देखना पड़ता है। थोड़ी देरके लिये मान लो, मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा; पर यदि मेरी देखा-देखी और भी अल्प आयुवाली योगिनियाँ राजभवनोंमें जाकर तुम्हारी-जैसी हठीलियोंकी सेवा स्वीकार करने लग जायँ, तब तो अनर्थ हो जाये न ? क्यों, तुम्हीं सोचो !

(श्रीराधा कुछ नहीं बोलतीं।)

योगिनी—क्यों, रुष्ट हो गयी क्या ?

राधा—योगिनी ! रुष्ट होनेकी बात नहीं है। तुम्हें मैंने आज पहले-पहल देखा है, पर मेरा मन बरबस तुम्हारी ओर खिंच गया है ; तुम्हें घर ले चलनेकी बड़ी लालसा होती है, इसीसे कहती हूँ।

(योगिनी ऐसी मुद्रा बनाती है मानो विचारमें पड़ गयी हो।)

ललिता—योगिनी मैया ! मेरी प्रार्थना मान लो। सच कहती हूँ, मेरी सखी-जैसी सरल हृदयकी दासीकी सेवा तुम्हें जीवनमें न मिली होगी, न मिलेगी।

योगिनी—अलख ! अलख !! चलो। क्या करें ? तुमलोगों-जैसी ना-समझोंको प्रसन्न करना ही पड़ेगा।

(श्रीराधा आनन्दमें भरकर योगिनीका कंधा पकड़कर ले चलती हैं। मुख्य द्वारसे न जाकर अपने उद्यानके द्वारसे अपने शयनागारमें पहुँचती हैं। वहाँ अत्यन्त आदरसे योगिनीको अपने सोनेके पलंगपर बैठाती हैं, बैठाकर इस प्रकार देखने लगती हैं मानो योगिनीके रूपको पी जाना चाहती हों।)

राधा—योगिनी ! आजतक मैं जानती थी, जगत्‌में एक ही सुन्दर है; पर ठीक वैसी सुन्दरता तुमने कहाँसे पा ली ! योगिनी ! एक बात······

(योगिनी आँखें मूँद लेती है।)

राधा—(ललितासे धीरे-धीरे) ललिते ! योगिनीका अतिथि-सत्कार कैसे होता है, यह तो मैं नहीं जानती। अब क्या होगा ?

विशाखा—(धीरेसे) कोई चिन्ता नहीं। मैं जानती हूँ। उस दिन नारद बाबा आये थे। कीर्ति मैयाने जैसे-जैसे किया था, वह सब मैंने देखा था, वैसे ही कर दूँगी। अरे! वे योगी थे, यह योगिनी है। बात तो एक ही है।

(श्रीराधा प्रसन्न हो जाती हैं और विशाखाके कानमें कुछ कहती हैं।)

विशाखा—(धीरेसे) मैं जैसे-जैसे कहूँ, वैसे-वैसे करती चली जा।

(विशाखा बहुत ही सुन्दर सोनेकी परात लाती हैं। ललिता अपने एक हाथमें सुन्दर वस्त्र लेकर खड़ी हो जाती हैं। चित्रा स्वर्ण-कलश लेकर जल देनेकी मुद्रामें खड़ी होती हैं।)

विशाखा—योगिनी मैया! चरण धोनेकी आज्ञा देकर हमलोगोंको कृतार्थ करो!

(योगिनी 'अलख-अलख' कहती हुई चरणोंको परातमें रख देती है।)

विशाखा—(श्रीराधासे धीरे-धीरे) तू यह कह कि आज हमलोग कृतार्थ हो गयीं।

राधा—योगिनी! आज हमलोग कृतार्थ हो गयीं।

योगिनी—अलख! अलख!!

(चरण धोये जाते हैं। वस्त्रसे पोंछकर श्रीराधा अकस्मात् कुछ काँप-सी जाती हैं और आश्चर्यभरी दृष्टिसे चरणोंके तलवेकी ओर देखने लगती हैं। इतनेमें चित्रा सोनेके गिलासमें शर्बत लाकर श्रीराधाके हाथमें पकड़ा देती हैं। विशाखाके संकेतके अनुसार श्रीराधा शर्बतके गिलासको योगिनीके होठोंसे लगाना चाहती हैं।)

योगिनी—(कुछ लजायी हुई-सी) वृषभानुलाडिली! रुष्ट न होओ तो एक बात कहूँ।

राधा—कहो!

योगिनी—बड़ा संकोच होता है, पर कहे बिना काम भी नहीं चलता।

राधा—बता, संकोच क्या है ?

योगिनी—तुमलोगोंने सुना होगा, जिस प्रकारका अन्न खाया जाता है, वैसी बुद्धि बनती है। यहाँतक कि भोजन परोसनेवालेके मनमें जो विचार होता है, उसके परमाणुका भी प्रभाव पड़ता है।

राधा—तो ?

योगिनी—(बहुत ही संकोचकी मुद्रा बनाकर) रुष्ट मत होना। तू तो किसी पुरुषका ध्यान कर रही है।

(श्रीराधा गिलास योगिनीके होठोंसे हटाकर ललिताके हाथमें दे देती हैं और कुछ लजायी-सी होकर खड़ी रह जाती हैं।)

योगिनी—(हँसने लगती है) हाः ''' हाः ''' हाः '''''' हाः ''' हाः ''' अरे ! हमें डर नहीं है। लाओ, लाओ, मैं तो आग हूँ। मेरेमें तो सब भस्म हो जायेगा। मैं तो तुमसे विनोद कर बैठी। बुरा मत मानना।

(श्रीराधा उत्साहपूर्ण होकर गिलास पुनः ललिताके हाथसे लेकर योगिनीके होठोंसे लगाती हैं।)

राधा—(धीरेसे ललिताके कानमें) ललिते ! यह तो मनकी बात जानती है।

ललिता—(कुछ द्रोहभरी दृष्टिसे योगिनीकी ओर देखकर) योगिनी मैया ! हमलोगोंको योगकी कुछ बात सुनाओगी ?

योगिनी—अलख ! अलख !! मैं भूल गयी, मुझसे भूल हो गयी। तुमलोगोंने समझा होगा, योगिनी मनकी बात जानती है। ओह ! क्या करूँ ? '''''' अलख ! अलख !!

ललिता—मैया ! हमलोग तो आपकी दासी हैं। दासियोंपर तो दया होनी ही चाहिये। दासीके सामने अपनेको छिपाना उचित नहीं।

योगिनी—(गम्भीर होकर) छिपानेकी बात नहीं, पर तुमलोग मुझे रातभर तंग करोगी जो ?

राधा—(ललिताके कानमें) तू कह दे कि सर्वथा साधारण-सी बात है, जो हमलोग पूछेंगी। तंग नहीं करेंगी !

ललिता—मैया ! हमलोगोंने तंग करनेके लिये थोड़े ही बुलाया है। तुम्हींने जो कुछ कहा, उसीके सम्बन्धमें कुछ पूछना चाहती हैं।

योगिनी—पूछो !

(श्रीराधा ललिताके कानमें कुछ देरतक कुछ कहती हैं।)

ललिता—मैया ! तुमने अभी कहा कि मेरी सखी किसी पुरुषका ध्यान कर रही है ! क्या तुम योगसे देखकर उसका रूप-रंग बता सकती हो ?

योगिनी—अलख ! अलख !! ये बातें तो बहुत साधारण हैं। ऐसी बातें तो मनचाहे जितनी पूछ सकती हो। अरे, मैंने सोचा था, तुमलोग सम्भवतः ...... !

ललिता—(उत्साहसे) नहीं ! नहीं !! हमलोग केवल बस, अपनी सखीके प्रियतमकी बात ही पूछेंगी और कुछ नहीं।

(योगिनी थोड़ी देरतक आँखें मूँदकर बैठी रहती है। फिर हँस पड़ती है।)

ललिता—हँसी क्यों ?

योगिनी—तुम्हारी सखीके प्रियतमका रूप-रंग वर्णन करनेके लिये ध्यान करके देखा तो बरबस हँस पड़ी।

ललिता—(उतावलीभरे स्वरमें) क्यों, क्या है ? वह इस समय क्या कर रहा है ?

योगिनी—(आँखें मूँदी रखकर) ओह ! तुम्हारी सखी इतनी भोली और वह इतना धूर्त ! क्या कहना है ? अच्छी जोड़ी मिली है।

ललिता—(बड़ी उत्कण्ठासे) क्यों-क्यों, क्या बात है ?

योगिनी—(हँसती हुई, आँखें मूँदी रखकर ही) कुछ मत पूछो ! बाहरसे उसके रंग-ढंगको देखकर लोग तो समझेंगे, संसारसे विरक्त है।

(कुछ ठहरकर) धूर्तकी ऐसी धूर्तता! महान् आश्चर्य!! मन इतना रंगीला और बाहर ऐसा विराग! क्या कहना?

(श्रीराधा-ललिता सभी चकित होकर योगिनीकी ओर देखती हैं।)

ललिता—(अतिशय उत्कण्ठित होकर) मैया! कुछ बताओ तो सही!

योगिनी—(हँसकर) अरे! क्या बताऊँ? बाहर तो ऐसा बना है मानो जगत्‌से सर्वथा विरागी है और भीतर-ही-भीतर तुम्हारी सखीका ध्यान करते हुए एक पद गुनगुना रहा है। (कुछ ठहरकर) उस रंगीले रसिककी बलिहारी। अच्छा, मेरा तानपूरा ला दे। मैं उसका वही पद सर्वथा उसीके स्वरमें गाकर तुमलोगोंको सुना देती हूँ। देख! मेरे योगका प्रभाव!

(ललिता तानपूरा योगिनीके हाथमें पकड़ा देती हैं।)

योगिनी गाने लगती है—

तुव मुख चंद चकोर मेरे नयना।
अति आरत अनुरागी लंपट भूल गई गति पलहुँ लगे ना॥
अरबरात मिलिबे को निसि दिन मिलेइ रहत मनु कबहुँ मिले ना।
भगवतरसिक रसिक की बातें रसिक बिना कोउ समुझि सके ना॥

(गाते-गाते योगिनी चेतना-शून्य होकर गिर पड़ती है। श्रीराधा घबरा जाती हैं। ललिता गुलाबपाश लेकर योगिनीके मुखपर छींटा देने लगती हैं। इसी अस्त-व्यस्ततामें योगिनीके वस्त्र हट जाते हैं तथा कटिमें छिपायी हुई मुरली दीखने लग जाती है। ललिता हँस पड़ती हैं। श्रीराधा लजाकर कुछ अलग खड़ी हो जाती हैं। इतनेमें योगिनी उठ बैठती है। ललिता जोरसे हँसने लगती हैं, पर योगिनी लजायी हुई कुछ नहीं बोलती।)

ललिता—(हँसकर) यह योगिनी बड़ी विचित्र है, जो पुरुषके रूपमें बदल जाये। ऐसी योगिनीके दर्शन बड़े भाग्यसे हुए। हा:……हा:……हा:……हा:……!

(विशाखा योगिनीकी साड़ी खींच लेती है। साड़ी खींचते ही योगिनीके स्थानपर श्रीश्यामसुन्दर दीखने लग जाते हैं। तोड़-मरोड़कर छिपाया हुआ मुकुट नीचे गिर पड़ता है। चित्रा उठाकर उसे अपने सिरसे लगाकर उनके सिरपर बाँध देती है। श्रीराधा उनके चरणोंको पकड़कर हँसती हुई बैठ जाती हैं तथा निर्निमेष दृष्टिसे देखती रह जाती हैं। इतनेमें ललिता भोजनका थाल लाती है। आसन बिछाया जाता है। सखियाँ श्यामसुन्दरको भोजन कराती हैं। श्रीराधा अपने हाथोंसे परोसती हैं तथा ललिता योगिनी बने हुए श्यामसुन्दरके तानपूरेको कंधेपर रखकर भोजनका पद गाती हैं।)

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

❁ विशेष ज्ञातव्य ❁

श्रीप्रिया-प्रियतमकी जो नित्य लीला है, वह चलती ही रहती है। उसका दर्शन कोई विरले ही संत करते हैं। यह लीला एक क्षणके लिये भी नहीं रुकती; दिव्य वृन्दावनधाममें निरन्तर चलती ही रहती है। यहाँतक कि श्रीकृष्ण जब मथुरा एवं द्वारकाकी लीला करने चले जाते हैं, तब भी यह लीला चलती ही रहती है। वृन्दावनमें श्रीकृष्णकी कैशोर्य-लीलामें कभी विराम नहीं होता।

बहुत देरतक कहने-सुननेके बाद श्रीगोपियोंने इसी लीलाको उद्धवको दिखलाया था और यह कहा था—'उद्धव! यह देखो, श्रीश्यामसुन्दर एक क्षणके लिये भी यहाँसे बाहर नहीं गये हैं।'

फिर उद्धवने देखा था कि ठीक उसी प्रकार श्यामसुन्दर प्रतिदिन गायें चराने चले जाते हैं और प्रतिदिन आते हैं तथा प्रतिदिन श्रीगोपियोंके साथ उसी प्रकार लीला चलती ही रहती है। लीलाका यह रहस्य इतना विलक्षण है कि उसमें प्रवेश होनेके बाद ही पता चल सकता है कि उसमें क्या-क्या होता है। अधिकारी-भेदसे लीला प्रकट होती है। जैसे फिल्ममें आदिसे अन्ततककी लीला सजायी होती है, वैसे ही भगवान्‌के रूपमें अनादि कालसे जितनी लीलाएँ हुई हैं, हो रही हैं एवं अनन्त कालतक जितनी होंगी, वे सब-की-सब सजाकर रखी हुई हैं। उस रहस्यको समझानेके लिये कोई दृष्टान्त नहीं है। सच्ची बात तो यह है कि श्रीकृष्णके द्वारा समझाया जाये बिना उसे समझना असम्भव है।

卐 卐 卐 卐 卐

॥ विजयेतां श्रीप्रियाप्रियतमौ ॥

मधुपर्क

मधुपर्क षोडशोपचार-पूजनका एक आवश्यक अङ्ग है। भगवदर्चनामें मधुपर्क अर्पित किया जाता है। मधु-दधि-घृतादि वस्तुओंके सम्मिश्रणसे निर्मित होनेके बाद भी मधुपर्कका माधुर्य और प्रभाव इन सभी वस्तुओंसे कुछ विशिष्ट प्रकारका होता है। ऐसा ही उत्कृष्टतर माधुर्य और महत्तर प्रभाव है इस पद-संकलनका और इसी हेतुसे पदोंका यह संकलन 'मधुपर्क' नामसे अभिहित है।

ये सम्पूर्ण पद ब्रजभाषाके विभिन्न भक्त-कवियोंके हैं। ब्रजभाषाका पद-साहित्य बहुत श्रेष्ठ तथा बड़ा विशाल है। भक्त-कवियोंने अपनी सहज सुन्दर भावाभिव्यक्तियोंसे इसे अत्यधिक समृद्ध बनाया है। ये पद ब्रजभाषाके भिन्न-भिन्न भक्त-कवियोंद्वारा रचित होनेके बाद भी संकलन-शैलीकी विशिष्टताके कारण इस संग्रहका माधुर्य और प्रभाव कुछ विशेष प्रकारका है।

जिन संतके द्वारा इस पुस्तकमें प्रकाशित लीलाएँ लिपिबद्ध हुई हैं, उन्हीं संतके द्वारा ब्रजभाषाके विशाल पद-साहित्यमेंसे इन पचपन पदोंको संचयित करनेका एवं उनको एक क्रमबद्ध शृङ्खलामें संकलित करनेका कार्य सम्पन्न हुआ है। अपने वस्तु-गुणके कारण यह संकलन सभीके लिये परम उपादेय बन गया है। पदोंका संकलन इस रीतिसे किया गया है कि इस शृङ्खलामें श्रीराधामाधवकी अष्टयाम-लीला स्वतः अनुस्यूत हो गयी है। उन संतके कथनानुसार ये सिद्ध पद भावोन्मेषमें सहयोग देंगे तथा इनके आश्रयसे भाव-राज्यका प्रवेश-पथ उद्भासित हो उठेगा।

स्वजनोंके आग्रहसे श्रीराधामाधवकी रसमयी लीलाओंके साथ-साथ इन पचपन पदोंको भी प्रकाशित किया जा रहा है। अर्थ-बोधकी सुगमताके लिये पदोंके साथ उनका भावार्थ भी प्रस्तुत है। अल्पमति और अल्पगतिके कारण भावार्थमें यदि पदोंका मर्म व्यक्त नहीं हो पाया हो तो विनम्र क्षमा-याचना है। यह मधुपर्क मधुरकी साधना और सिद्धिमें सहायक बने, यही आन्तरिक भावना है।

[१]

जय राधा जय सब सुख साधा जय जय कमलनयन बस करनी।
जय स्यामा जय सब सुख धामा जय जय मनमोहन मन हरनी।।
जय गोरी जय नित्य किसोरी जय जय भागनि भरी सुभामिनि।
जय नागरि जय सुजस उजागरि जय जय श्रीहरिप्रिया जय स्वामिनि।।

कमलनयन श्रीकृष्णको वशमें करनेवाली और सब सुखोंको प्रस्तुत करनेवाली श्रीराधाकी जय हो! मनमोहन श्रीकृष्णके मनको हरनेवाली एवं सब सुखोंकी अधिष्ठात्री श्रीराधाकी जय हो! गौरवर्णा, नित्यकिशोरी परम सौभाग्यशालिनी एवं नारीरत्नरूपा श्रीराधिकाकी जय हो! श्रीहरिप्रियाजी कहते हैं कि जिनकी सुन्दर कीर्तिसे सभी दिशाएँ दीप्तिमान् हो रही हैं, उन हमारी स्वामिनी श्रीराधिका नागरीकी जय हो!

[२]

प्रात समय नव कुंज द्वार ह्वै ललिता ललित बजाई बीना।
पौढ़े सुनत स्याम श्रीस्यामा दंपति चतुर नवीन नवीना।।
अति अनुराग सुहाग भरे दोउ कोक कला जो प्रवीन प्रवीना।
चतुर्भुजदास निरखि दंपति सुख तन मन धन न्योछावर कीना।।

प्रातःकाल नवकुंजके द्वारपर श्रीललिताजी सुन्दर वीणा बजाने लगीं। नवकिशोरी श्रीराधा एवं नवकिशोर श्रीकृष्ण बड़े चतुर हैं। ये युगलमूर्ति

श्रीश्यामा-श्याम भीतर लेटे-लेटे ललिताजीके यन्त्र-वादनको सुन रहे हैं। दोनों श्रोता अत्यन्त प्रेम एवं सौभाग्यके आगार हैं। वे प्रेम-कलाओंमें एक-से-एक बढ़कर पण्डित हैं। स्वामी चतुर्भुजदासजीने श्रीप्रिया-प्रियतमका यह सुख देखकर अपने तन-मन-धन—तीनोंको उनपर न्योछावर कर दिया।

[३]

परी बलि कौन अनोखी बान।
ज्यों ज्यों भोर होत है त्यों त्यों पौढ़त हौ पट तानि॥
आरस तजहु अरुनई उदई गई निसा रति मानि।
श्रीहरिप्रिया प्रान धन जीवन सकल सुखन की खानि॥

हे सखि और हे प्राणप्यारे! तुम्हारी बलैया लेती हूँ। तुमलोगोंका यह कैसा अद्भुत स्वभाव हो गया है कि जैसे-जैसे प्रातःकाल होता है, वैसे-वैसे तुमलोग चादर तानकर सोने लगते हो। अरे! आलस्यका परित्याग करो। सूर्यका अरुण प्रकाश उदयाचलपर झलकने लगा है और जिस निशामें प्रेममिलनका आनन्द मनाया था, वह रात्रि भी व्यतीत हो गयी है। श्रीहरिप्रियाजी कहते हैं, तुम दोनों ही मेरे समस्त सुखोंकी खान हो, मेरे प्राणस्वरूप हो, धनस्वरूप हो और जीवनस्वरूप हो।

[४]

मंगल आरति हरख उतारी।
मंगल कुंज महल बृंदाबन मंगल मूरति प्रीतम प्यारी॥
मंगल गान तान धुनि छाई बीन मृदंग बजै सुखकारी।
मंगल सखी समाज मनोहर मंगल धूप महक मतवारी॥
मंगलमय नित उत्सव मंगल मोद विनोद प्रमोद अपारी।
सरसमाधुरी निस दिन मंगल जिन छबि मंगल निज उर धारी॥

वृन्दावनके मङ्गलमय कुञ्जभवनमें श्रीप्रिया-प्रियतमकी मङ्गलमूर्ति विराजमान है। सखियाँ हर्षित होकर उनकी मङ्गल आरती उतार रही हैं। उनके मङ्गल गीतोंकी तान और ध्वनि चारों ओर व्याप्त हो रही है

और वीणा एवं मृदङ्ग आदि वाद्य आनन्ददायक स्वरमें बज रहे हैं। सखियोंका मनोहर समूह भी मङ्गलमय ही है और धूपकी मादक सुगन्धिमें भी मङ्गल ही भरा हुआ है। वहाँपर होनेवाले नित्यके मङ्गलमय उत्सव भी कल्याण करनेवाले हैं। हर्ष, आनन्द तथा उल्लासकी तो कोई सीमा ही नहीं है श्रीसरसमाधुरीजी कहते हैं, जिन्होंने इस मङ्गलमय छबिको ने अपने हृदयमें धारण कर लिया है, उनके लिये अहर्निश मङ्गल-ही-मङ्गल है।

[५]

कुंज द्वार ललना अरु लालन ठाढ़े दे गलबाँही री।
मूंद मूंद खोलत चख चंचल अंचल की सुधि नाहीं री॥
झुकि झुकि जात परस्पर दोऊ आलस अंगन माहीं री।
मुख अंबुज मकरंद प्रकासित ज्यों ज्यों वे जमुहाहीं री॥
बिथुरे बार कपोलन ऊपर स्रम कन मुख झलकाहीं री।
सरसमाधुरी स्रवत सुधा रस अलि पीवत न अघाहीं री॥

कुंजके द्वारपर लाडिली और लाल गलबाँही दिये हुए खड़े हैं। वे अपनी चञ्चल आँखोंको बार-बार बंद करते और फिर खोलते हैं। वे ऐसे बेसुध-से हो रहे हैं कि अञ्चल और उपरैना कहाँ जा रहा है, इसकी भी सुधि उन्हें नहीं है। दोनों एक-दूसरेके अङ्गोंपर झुक-झुक पड़ते हैं और एक दिव्य आलस्यसे उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग शिथिल हुए जा रहे हैं। जब-जब वे जँभाई लेते हैं, तब सुवासके फैलनेसे ऐसा प्रतीत होता है मानो उनके मुखरूपी कमलका मकरन्द झर रहा हो। उनके कपोलोंके ऊपर अलकावली छुट रही है तथा मुखमण्डलपर पसीनेकी बूँदें चमक रही हैं। श्रीसरसमाधुरीजी कहते हैं कि (उनके मुख-कमलकी) इस शोभासे ऐसा अमृत-रस प्रवाहित हो रहा है कि जिसका पान करते हुए अलियाँ (सखियाँ एवं भ्रमरियाँ) कभी तृप्त ही नहीं होतीं।

[६]

झूमक सारी हो तन गोरें।
जगमग रह्यो जराव को टीको छबि की उठत झकोरें॥

रतन जटित के तरल तरौना मानो हो जात रवि भोरें ।
दुलरी कंठ निरखि नकबेसर पिय दृग भये हैं चकोरें ॥
मंद मंद पग धरत धरनि पै हँसत लसत चित चोरें ।
स्यामदास प्रभु रस बस कर लीने चपल नयन की कोरें ॥

श्रीराधा अपने गोरे शरीरपर छोटे-छोटे झुमकोंकी किनारीदार साड़ी धारण किये हुए हैं। उनके जगमगाते हुए जड़ाऊ टीकेसे तो मानो सौन्दर्यकी लहरें उठ रही हैं। रत्नजटित चञ्चल कर्णफूलकी छवि ऐसी लगती है मानो प्रातःकालीन सूर्य प्रकट हुए हों। कण्ठका दुलड़ा हार और नाककी बेसरको देखकर प्रियतम श्रीकृष्णकी आँखें चकोर-सी बन गयी हैं। वे पृथ्वीपर धीरे-धीरे पद रखते हुए मन्द गतिसे चल रही हैं; उस समय उनकी सस्मित शोभा चित्तको चुरा लेती है। प्रेमी भक्त श्यामदास कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीकृष्णचन्द्रको श्रीराधाकिशोरीने अपने चञ्चल नेत्रोंके कटाक्षसे प्रेमाभिभूत कर लिया है।

[७]

लटकत आवत कुंज भवन ते ।
ढुरि ढुरि परत राधिका ऊपर जाग्रत सिथिल गवन ते ॥
चौंक परत कबहूँ मारग बिच चलत सुगंध पवन ते ।
भर उसाँस राधा बियोग भय सकुचे दिवस रवन ते ॥
आलस मिस न्यारे न होत हैं नेकहूँ प्यारी तन ते ।
रसिक टरौ जिन दसा स्याम की कबहूँ मेरे मन ते ॥

श्रीप्रिया-प्रियतम झूमते हुए कुंज-भवनसे आ रहे हैं। वे श्रीप्रियाजीके ऊपर ढुलक-ढुलक पड़ रहे हैं। मन्द गतिसे चल रहे हैं और इस चलनेसे ही वे जाग-जाग पड़ते हैं। सुरभित समीर प्रवाहित हो रहा है। कभी मार्गमें उसका झोंका लगता है तो वे चौंक पड़ते हैं। सूर्यके उदय होनेसे वे श्रीराधिकाके वियोगकी आशङ्का करते हुए उसाँसें भर रहे हैं और म्लान-से हो रहे हैं। आलस्यके मिससे प्रियतम श्रीकृष्ण प्यारीजीके अङ्गोंसे किंचित् भी पृथक् नहीं हो रहे हैं। रसिकरायजी यह कामना करते हैं कि श्यामसुन्दरकी यह प्रेम-दशा मेरे मानसपटलपर सदा अङ्कित रहे; कभी भी अन्तर्हित न हो!

[८]

जयति श्रीराधिके सकल सुख साधिके
तरुनि मनि नित्य नव तन किसोरी ।
कृष्ण तन नील घन रूप की चातकी
कृष्ण मुख हिम किरन की चकोरी ॥
कृष्ण मन भृंग बिस्राम हित पद्मिनी
कृष्ण दृग मृगज बंधन सुडोरी ।
कृष्ण अनुराग मकरंद की मधुकरी
कृष्ण गुन गान रस सिंधु बोरी ॥
परम अद्भुत अलौकिक तेरी गति लखि
मनसि साँवरे रंग अंग गोरी ।
और आचरज मैं कहूँ न देख्यो सुन्यो
चतुर चौंसठ कला तदपि भोरी ॥
बिमुख पर चित्त ते चित्त जाको सदा
करत निज नाह की चित्त चोरी ।
प्रकृत यह गदाधर कहत कैसे बने
अमित महिमा इतै बुद्धि थोरी ॥

सम्पूर्ण सुखोंको प्रस्तुत करनेवाली युवतीगणमें रत्नरूपा एवं नित्य नवीन कैशोर्यसे युक्त अङ्गोंवाली श्रीराधाकी जय हो! वे श्रीकृष्णचन्द्रके श्याम कलेवररूपी मेघावलीके लिये चातकीरूपा हैं और श्रीकृष्णके मुखचन्द्रके प्रति वैसे ही आसक्त हैं, जैसे चन्द्रमाके प्रति चकोरी। श्रीकृष्णके मनरूपी भ्रमरको भी इन राधारूपी पद्मिनीके ऊपर स्थित होनेपर ही विश्राम मिलता है। वे मानो (रेशमकी) ऐसी सुन्दर डोरी हैं, जो श्रीकृष्णके नयनरूपी मृगोंको बाँध लेती हैं। वे श्रीकृष्ण-प्रेमरूपी मकरन्दका भ्रमरीकी भाँति पान करती रहती हैं और श्रीकृष्णके गुणोंके कीर्तनसे जो रस प्रवाहित होता है, उसके समुद्रमें सदा डूबी रहती हैं। इनकी यह परम अद्भुत और अलौकिक लीला देखो (तो) सही—शरीरका

रंग तो गौर है, पर भीतर मनमें भरा हुआ है श्याम रंग। और ऐसा आश्चर्य तो मैंने न कहीं देखा और न कहीं सुना है कि चौंसठ कलाओंमें निपुण होते हुए भी वे नितान्त भोळी ही हैं। जिनका चित्त कभी दूसरोंकी ओर आकृष्ट नहीं होता, ऐसी श्रीराधिका अपने स्वामी श्रीकृष्णके चित्तका सदैव हरण किये रहती हैं। उधर उनकी महिमा तो अपार है और इधर मेरी बुद्धि अत्यन्त अल्प है। गदाधरजी कहते हैं कि फिर भला इनके स्वरूपका वास्तविक वर्णन कैसे हो सकता है?

[९]

नवल व्रजराज को लाल ठाढ़ो सखी
ललित संकेत बट निकट सोहे।
देख री देख अनिमेष या वेष को
मुकुट की लटक त्रिभुवन जु मोहे॥
स्वेद कन झलक कछु झुकी सी रहत पलक
प्रेम की ललक रस रास कीये।
धन्य बड़भाग वृषभान नृपनंदिनी
राधिका अंस पर बाहु दीये॥
मनि जटित भूमि पर नव लता रही झूमि
कुंज छबि पुंज बरनी न जाई।
नंद नंदन चरन परस हित जान यह
मुनिन के मनन मिल पाँत लाई॥
परम अद्भुत रूप सकल सुख भूप यह
मदन मोहन बिना कछु न भावे।
धन्य हरिभक्त जिनकी कृपा तें सदा
कृष्ण गुन गदाधर मिस्र गावे॥

सखि! नवकिशोर नन्दनन्दन श्रीकृष्ण संकेतवटके समीप खड़े हुए कैसे सुन्दर लग रहे हैं! अरी! इस वेषको तो बस, अपलक नेत्रोंसे देखा ही करें। मुकुट ऐसी रीतिसे किंचित् तिरछा झुका हुआ है कि इससे

देखकर तीनों लोक मोहित हो रहे हैं। प्रेमके प्रबल आवेगमें भरकर उन्होंने रास-विलास किया है। इसीसे उनके शरीरपर पसीनेकी बूँदें झलक रही हैं और पलकें कुछ झुकी पड़ रही हैं। वृषभानुनृपकी लाडिली श्रीराधिकाके बड़े भाग्य हैं, जिनके कंधोंपर ये अपनी भुजा रखे हुए हैं। मणिजटित पृथ्वीपर नवीन लताएँ झूम रही हैं। परम मनोहर कुञ्जोंकी शोभा-राशिका तो वर्णन हो नहीं सकता। ये लताराजि और कुञ्ज-समुदाय तो वास्तवमें मुनि-जनोंके मनोंके साकार रूप हैं, जिन्होंने श्रीकृष्णके चरण-स्पर्शको ही परम वरेण्य मानकर यह रूप धारण कर लिया है। इस अत्यन्त अद्भुत रूपका दर्शन समस्त सुखोंका शिरोभूषण है। अब मदन-मोहनके बिना कुछ भी प्रिय नहीं लगता। हरि-भक्त-गण धन्य हैं; क्योंकि उन्हींकी कृपासे गदाधर मिश्र सर्वदा भगवान् श्रीकृष्णका गुण-गान करता रहता है।

[१०]

सुमिरौ नट नागर वर सुंदर गोपाल लाल।
सब दुख मिटि जैहें वे चितवत लोचन बिसाल॥
अलकन की झलकन लखि पलकन गति भूल जात
भ्रू बिलास मंद हास रदन छदन अति रसाल।
निंदत रबि कुंडल छबि गंड मुकुर झलमलात
पिच्छ गुच्छ कृतऽवतंस इंदु बिमल बिंदु भाल॥
अंग अंग जित अनंग माधुरी तरंग रंग
बिमद मद गयंद होत देखत लटकीलि चाल।
हसन लसन पीत बसन चारु हार वर सिंगार
तुलसि रचित कुसुम खचित पीन उर नवीन माल॥
ब्रज नरेस बंस दीप वृंदाबन बर महीप
वृषभान मान पात्र सहज दीन जन दयाल।
रसिक भूप रूप रास गुन निधान जान राय
गदाधर प्रभु जुवती जन मुनि मन मानस मराल॥

नटवर-नागर सुन्दर श्रीगोपाललालका स्मरण करो। उनके उन बड़े-बड़े नेत्रोंका स्मरण करते ही सब दुःखोंका नाश हो जायेगा। उनकी अलकावलीकी शोभा, भौंहोंकी भङ्गिमा, मन्द मुस्कान और अत्यन्त रसभरे अधरोंकी मधुरिमा देखते समय पलकोंका पड़ना बंद हो जाता है। दर्पणके समान उनके गण्डस्थलमें झलमल करते हुए प्रतिबिम्बित कुण्डलोंकी छबि सूर्यकी प्रभाको भी तिरस्कृत कर दे रही है। उनके शिरपर मोरपंखकी कलँगी लगी है और ललाटपर विमल चन्द्रकी भाँति तिलक-बिंदु है। कामदेवको भी जीतनेवाले उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी शोभा-माधुरी अपनी तरंगोंसे सम्पूर्ण दिशाओंको रञ्जित कर रही है। उनकी लटकीली चालसे मत्त गजराजका भी अभिमान चूर्ण हो जाता है। वे पीताम्बर धारण किये हुए हैं। उनका मुखमण्डल हँसीसे परिदीप्त है। वे सुन्दर हारका उत्तम शृङ्गार धारण किये हुए हैं। अपने भरे हुए वक्षःस्थलपर तुलसीकी नवीन माला धारण किये हुए हैं, जिसमें बीच-बीचमें पुष्प गुम्फित हैं। वे व्रजराजके वंश-दीप हैं। वृन्दावनके वो अधिपति ही हैं। श्रीवृषभानु उन्हें अत्यन्त आदर देते हैं तथा वे दीनोंके प्रति स्वाभाविक ही दयासे परिपूर्ण हैं। वे रसिकोंके राजा हैं, रूपोंके भण्डार हैं, गुणोंके आकर हैं और चतुर जनोंमें अग्रगण्य हैं। गदाधरजी कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीकृष्णचन्द्र व्रज-युवतियों एवं मुनि-जनोंके मन-रूपी मानसरोवरमें राजहंसके समान नित्य विहार करते हैं।

[११]

आज इन दोउन पै बलि जैये।
रोम रोम सों छबि बरसत है निरखत नैन सिरैये॥
रूप रास मृदु हास ललित मुख उपमा देत लजैये।
नारायण या गौर स्याम को हिये निकुंज बसैये॥

आज इन दोनोंपर न्यौछावर हो जाना चाहिये। इनके रोम-रोमसे सुषमाकी वर्षा हो रही है, इन्हें देख-देखकर आँखोंको शीतल कर लो। मधुर मुस्कानसे सुशोभित रूपके निधान मुख-मण्डलकी उपमा किस वस्तुसे दूँ, उपमा देनेमें संकोच हो रहा है। वैसी कोई वस्तु है जो नहीं। नारायण स्वामीजी कहते हैं कि इस गौर-स्याम-मूर्तिको तो बस, हृदय-रूपी निकुञ्जमें ही बसा लेना चाहिये।

[१२]

आज सिंगार निरखि स्यामा को नीको बन्यो स्याम मन भावत ।
यह छबि तिनहिं लखायो चाहत कर गहि कैं नख चंद दिखावत ॥
मुख जोरे प्रतिबिंब बिराजत निरख निरख मन में मुसकावत ।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर श्रीराधा अरस परस दोउ रीझि रिझावत ॥

आज श्रीराधिकाके शृङ्गारका दर्शन तो करो । अहा ! कितना सुन्दर बना है ! श्रीकृष्णचन्द्रके मनके अत्यन्त अनुकूल हुआ है । श्रीकृष्णचन्द्र वह शोभा स्वयं श्रीराधाकिशोरीको भी दिखा देना चाहते हैं एवं इसी उद्देश्यसे उनका हाथ पकड़कर उनके ही पद-नख-चन्द्रोंकी ओर उनकी दृष्टि ले जाते हैं, जिससे मुख-मण्डल उज्ज्वल नखोंमें प्रतिबिम्बित हो जाये और किशोरी अपना रूप देख लें । उनके नखोंमें दोनोंके सटे हुए मुखारविन्दकी शोभा प्रतिबिम्बित हो रही है, जिसे देख-देखकर दोनों मुस्कुरा रहे हैं । चतुर्भुजदासजी कहते हैं कि मेरे प्रभु श्रीकृष्ण एवं राधाजी दोनों परस्पर स्पर्श कर-करके एक-दूसरेपर मोहित हो रहे हैं ।

[१३]

सारी सँवारी है सोनजुही अरु जूही की तापै लगाई किनारी ।
पंकज के दल को लहंगा अँगिया गुलबाँस की सोभित न्यारी ॥
चमेली को हार हमेल गुलाब को मौर की बेंदी दे भाल सँवारी ।
आज विचित्र सँवारी के देखिए कैसी सिंगारी है प्यारे ने प्यारी ॥

देखो ! प्यारे श्रीकृष्णने अद्भुत ढंगसे सजाकर प्रियाजीका आज कैसा शृङ्गार किया है ! सोनजुही पुष्पोंकी साड़ी सजायी है, जिसमें जूहीकी किनारी लगी हुई है । कमलपुष्पदलोंसे लहँगा बनाया है और गुलबाँसकी कञ्चुकी (चोली) अपनी निराली ही छटा दिखा रही है । चमेलीके पुष्पोंका हार बनाया है और गुलाबका हमेल है तथा ललाटपर मौलसिरीके फूलकी बेंदी शोभा दे रही है ।

[१४]

सोनजुही की बनी पगिया ह चमेली को गुच्छ रह्यौ झुकि न्यारो ।
द्वै दल फूल कदंब के कुंडल सेवती जामाहु घूम घुमारो ॥
नौ तुलसी पटुका घनस्याम गुलाब हजार चमेली को न्यारो ।
फूलन आज बिचित्र बन्यौ देखो कैसो सिंगारचो है प्यारी ने प्यारो ॥

और इधर देखो ! राधा प्यारीने अद्भुत पुष्प-रचनाके द्वारा प्यारे श्रीकृष्णचन्द्रका कैसा शृङ्गार किया है। सोनजुही पुष्पोंकी तो पाग बनी हुई है, जिसमें चमेलीका एक गुच्छा निराली अदासे लटक रहा है। कदम्ब पुष्पके दो गुच्छोंने कुण्डलका स्थान ले लिया और सेवतीके फूलोंका खूब घेरदार जामा है। नीलसुन्दरकी विविध रंगवाली चादरकी छवि और भी निराली है, जिसमें नाना वर्णोंके नव तुलसीदल, विभिन्न प्रकारके गुलाब, गेंदा और चमेलीके पुष्पोंका उपयोग किया गया है।

[१५]

आजु राधिका भोरहीं जसुमति घर आई ।
महरि मुदित हँसि यों कह्यो मथि मॉंन दुहाई ॥
आयसु लै ठाढ़ी भई कर नेति सुहाई ।
रीतो माट बिलोवई चित जहाँ कन्हाई ॥
उनके मन की का कहौं ज्यों दृष्टि लगाई ।
लैया नोई वृषभ सों गैया बिसराई ॥
नैननि में जसुमति लखी दुहुँ की चतुराई ।
सूरदास दंपति दसा कापै कहि जाई ॥

आज श्रीराधाजी प्रातः काल ही मैया यशोदाके घर आयीं। महरीने प्रसन्न मनसे हँसकर इस प्रकार कहा कि लाडिली! तुम्हें वृषभानुकी दुहाई है, तनिक दही मथ दे। (मैयाकी) आज्ञाको सिरपर धारण करके श्रीराधा (मथानीको लेकर) खड़ी हो गयीं। मथानीको घुमानेवाली रस्सी उनके हाथमें शोभा दे रही थी, किन्तु रीते मटकेमें ही वे उसे घुमाने

लगीं। मन तो उनका जहाँ श्रीकृष्ण थे, वहाँपर अटका हुआ था। उधर श्रीकृष्णके चित्तकी दशाका भी क्या वर्णन करें! जब उन्होंने श्रीलाड़िलीजीकी ओर देखा तो दूध दुहनेके लिये नोईसे बैलके पैर बाँध दिये। गायको भूल गये। श्रीयशोदाने आँखों-ही-आँखोंमें दोनोंकी परस्पर दर्शनकी यह भोली चतुरता देख ली। सूरदासजी कहते हैं कि श्रीराधाकृष्णकी प्रेम-विभोर-दशाका कौन वर्णन कर सकता है?

[१६]

महरि कह्यौ री लाडिली किन मथन सिखायौ।
कहँ मथनी कहँ माट है चित कहाँ लगायौ॥
अपने घर यौं ही मथै करि प्रगट दिखायौ।
कै मेरे घर आई कै तैं सब बिसरायौ॥
मथन नहीं मोहि आवई तुम सौंह दिवायौ।
तिहि कारन मैं आइ कै तुव बोल रखायौ॥
नंद घरनि तब मथि दह्यौ इहि भाँति बतायौ।
सूर निरखि मुख स्याम कौ तहँ ध्यान लगायौ॥

श्रीयशोदाजी कहने लगीं कि अरी लाड़िली! तुझे किसने मथना सिखाया है? मथानी तो कहीं है, मटका कहीं और तुम्हारा चित्त कहीं अन्यत्र लग रहा है। आज तूने स्पष्ट दिखा दिया कि तू अपने घरपर कैसे मथा करती है। अथवा मेरे ही घर आकर तू सब कुछ भूल गयी है! तब किशोरी बोली—मुझे मथना आता नहीं। तुमने शपथ दिला दी, इसी कारण (मटकेके पास) आकर मैंने केवल तुम्हारी बात रखी है। सूरदासजी कहते हैं कि नन्दरानीने तब दही मथकर, 'इस प्रकार बिलोया जाता है'—यह बताया; किन्तु राधाजी श्रीकृष्णका मुख देखते हुए उधर ही ध्यान लगाये रहीं।

[१७]

प्रगटी प्रीति न रही छपाई।
परी दृष्टि बृषभानु सुता की दोउ अरुझे निरवारि न जाई॥

बछुरा छोरि खरिक कौं दीन्हो आपु कान्ह तन सुधि बिसराई ।
नोवत वृषभ निकसि गैया गई हँसत सखा का दुहत कन्हाई ।।
चारों नैन भए इक ठाहर मनहीं मन दुहुँ रुचि उपजाई ।
सूरदास स्वामी रतिनागर नागरि देखि गई नगराई ।।

श्रीराधा और श्रीकृष्णकी प्रीति प्रकट हो गयी, अब वह गुप्त नहीं रही। वृषभानुनन्दिनीकी दृष्टि पड़ते ही दोनोंका मन इस प्रकार उलझ गया कि वे अलग करनेमें असमर्थ हो रहे हैं। श्रीकृष्णने खरिकमें बँधे हुए बछड़ेको तो खोल दिया, किन्तु उन्हें अपने शरीरकी सुधि ही नहीं रही। दूध दुहनेके लिये बैलके पैरोंमें रस्सी बाँध रहे हैं और उधर गायें बाहर निकल गयीं। सखा हँस रहे हैं और कह रहे हैं कि कन्हैया! तू किसे दुह रहा है? आँखोंके चार होते ही दोनोंके मनोंमें तीव्र आकर्षण उत्पन्न हो गया। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी श्रीकृष्ण हैं तो प्रीति-रीतिमें बड़े चतुर, परन्तु नागरी राधिकाको देखकर उनकी सारी चतुराई समाप्त हो गयी।

[१८]

या घर प्यारी आवति रहियौ ।
महरि हमारी बात चलावत मिलन हमारी कहियौ ।।
एक दिवस मैं गई जमुन तट तहँ उन देखी आई ।
मोकौं देखि बहुत सुख पायौ मिलि अंकम लपटाई ।।
यह सुनि कै चलि कुँवरि राधिका मोकों भई अबार ।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हों मोहन नंद कुमार ।।

श्रीयशोदाजी राधिकासे कहती हैं कि प्यारी बेटी! तुम इस घरमें सदा आया करना। तुम्हारी माँ क्या कभी हमारी चर्चा चलाती हैं? उनसे हमारे प्रेम-मिलनका निवेदन कर देना। एक दिन मैं यमुना-तटपर गयी थी। वहाँ उन्होंने मुझे देखा। मुझे देखकर वे बहुत आनन्दित हुईं और मुझे हृदयसे लगा लिया। यह सुनकर, 'अब मुझे देर हो गयी है'—यों कहती हुई किशोरी राधिका चल पड़ीं।

सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी नन्दनन्दन श्रीकृष्ण स्वयं मनमोहन हैं, उनका भी मन राधाने हर लिया।

[१९]

हरि सों धेनु दुहावत प्यारी ।
करत मनोरथ पूरन मन बृषभानु महर की बारी ।।
दूध धार मुख पर छबि लागति सो उपमा अति भारी ।
मानो चंद कलंकहि धोवत जहँ तहँ बूंद सुधा री ।।
हाव भाव रस मगन भए दोउ छबि निरखत ललिता री ।
गो दोहन सुख करत सूर प्रभु तीनिहुँ भुवन कहा री ।।

राजा वृषभानुकी पुत्री प्यारी राधिका प्यारे श्रीकृष्णसे गाय दुहा रही है। वे भी उनकी इच्छा पूरी कर रहे हैं। दूध दुहते समय दुग्ध-धाराकी फुहारें उड़-उड़कर उनके मुखचन्द्रपर पड़ रही हैं। उसकी उपमा भी गौरवमयी बन गयी है। ऐसा लग रहा है मानो चन्द्रमा अपने कलंकको धो रहा हो और इसीसे यत्र-तत्र सुधाकी बूँदें दिखलायी दे रही हैं। दोनों ही एक दूसरेके हाव-भावके रस-सिन्धुमें निमग्न हो रहे हैं और ललिताजी यह शोभा देख रही हैं। सूरदासके स्वामी गायें दुहते समय जिस सुखकी सृष्टि कर रहे हैं, वह तीनों लोकोंमें भी कहाँ प्राप्य है?

[२०]

धेनु दुहत अति ही रति बाढ़ी ।
एक धार दोहनि पहुँचावत, एक धार जहँ प्यारी ठाढ़ी ।।
मोहन कर तें धार चलति परि मोहनि मुख अति ही छबि बाढ़ी ।
मनु जलधर जलधार वृष्टि लघु पुनि पुनि प्रेम चंद पर बाढ़ी ।।
सखी संग की निरखति यह छबि भइ ब्याकुल मन्मथ की डाढ़ी ।
सूरदास प्रभु के रस बस सब भवन काज तें भई उचाढ़ी ।।

गायके दुहते समय ही प्रेम वेगसे बढ़ा। ऐसी कलासे श्रीकृष्ण गाय दुहने लगे कि एक धार तो दोहनीके बीचमें जाती थी और दूसरी धार जहाँ प्रियाजी खड़ी थीं, वहाँ पहुँचती थी। श्रीकृष्णके हाथोंसे चलकर मनमोहिनी राधिकाके मुखपर पड़ती हुई धारकी शोभा बड़ी ही सुन्दर प्रतीत होती थी मानो वर्धनशील प्रेमके कारण घनश्यामरूपी श्याम-घनसे जलधाराकी फुहारें बार-बार चन्द्रमापर पड़ रही हों। साथकी सखियाँ इस शोभाको देख-देखकर स्नेहाकुल हो उठीं। उनका हृदय प्रेमसे संतप्त हो उठा। सब-की-सब सूरदासजीके स्वामी श्रीकृष्णके प्रेमके वशीभूत हो गयीं और उनका मन घरके काम-काजसे उचट गया।

[२१]

सिर दोहनी चली लै प्यारी।
फिरि चितवत हरि हँसे निरखि मुख मोहन मोहनि डारी॥
ब्याकुल भई गई सखियन लौं ब्रज कौं गये कन्हाई।
और अहिर सब कहाँ तुम्हारे हरि सौं धेनु दुहाई॥
यह सुनि कै चकित भई प्यारी धरनि परी मुरझाई।
सूरदास सब सखियन उर भरि लीन्ही कुँवरि उठाई॥

श्रीकृष्णसे दूध दुहाकर श्रीकृष्ण-प्यारी राधा दोहनीको सिरपर रखकर चलीं। घूमकर वे फिर देखने लगीं। श्रीकृष्ण भी उनका मुख देखकर विहँस दिये और इस प्रकार मदनमोहनने उनपर अपनी मोहनी डाल दी। राधा स्नेह-विह्वल हो उठीं, पर जाना तो था ही। वे अपने सखियोंमें चली गयीं और श्रीकृष्ण व्रजकी ओर बढ़े। सखियोंने श्रीराधाकी व्याकुलता देखकर और उसका कारण भाँपकर उनसे पूछा कि तुम्हारे और सब ग्वाले कहाँ गये, जो तुमने श्रीकृष्णसे गाय दुहाई? यह सुनकर श्रीराधासे कोई उत्तर तो देते नहीं बना। वे चकरा गयीं और मूर्च्छित-सी होकर पृथ्वीपर गिर पड़ीं। सूरदास कहते हैं कि सब सखियोंने किशोरी राधाको उठाकर हृदयसे लगा लिया।

[२२]

खेलन के मिस कुँवरि राधिका नंद महर कें आई हो।
सकुच सहित मधुरे करि बोली घर हैं कुँवर कन्हाई हो॥
सुनत स्याम कोकिल सम बानी निकसे अति अतुराई हो।
माता सो कछु करत कलह हे रिस डारी बिसराई हो॥
मैया री तू इनको चीन्हति बारंबार बताई हो।
जमुना तीर काल्हि मैं भूल्यो बाँह पकरि लै आई हो॥
आवत इहाँ तोहि सकुचति है मैं दै सौंह बुलाई हो।
सूर स्याम ऐसे गुन आगर नागरि बहुत रिझाई हो॥

खेलनेके मिससे किशोरी राधिका नन्दरानीके घर आयीं। बड़े संकोचसे मधुर स्वरमें पूछा कि कुँवर कन्हैया घरमें है क्या? कोकिलके समान उनकी मीठी वाणी सुनकर श्यामसुन्दर अत्यन्त शीघ्रतासे बाहर निकल आये। वे मातासे कुछ झगड़ रहे थे, पर अब अपने क्रोधको भुला दिया और कहने लगे कि माँ! तू इन्हें पहचानती है क्या? मैंने कई बार तुझे इनके विषयमें बताया है। मैं कल यमुना-किनारे राह भूल गया था तो ये बाँह पकड़कर मुझे ले आयीं। यहाँ आते हुए तेरा संकोच कर रही थीं तो मैंने शपथ देकर बुलाया है। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर ऐसे गुण-निधान हैं कि उन्होंने राधाको अत्यधिक रिझा लिया।

[२३]

जसुमति राधा कुँवरि सँवारति।
बड़े बार सीमंत सीस के प्रेम सहित निरुवारति॥
माँग पारि बेनी जु सँवारति गूँथी सुंदर भाँति।
गोरें भाल बिंदु बंदन मनु इंदु प्रात रवि काँति॥
सारी चीर नई फरिया लै अपने हाथ बनाई।
अंचल सौं मुख पोंछि अंग सब आपुहि लै पहिराई॥

तिल चाँवरि बतासे मेवा दियो कुँवरि की गोद ।
सूर स्याम राधा तनु चितवत, जसुमति मन तन मोद ॥

यशोदा मैया राधाकिशोरीका शृङ्गार कर रही हैं। वे शीशके बड़े-बड़े बालोंको प्रेमसे सुलझा रही हैं तथा मध्य भागमें माँग काढ लेनेके बाद सुन्दर ढंगसे गूँथती हुई वेणीकी रचना कर रही हैं। गोरे ललाटपर रोलीका तिलक-बिंदु ऐसा लगता है मानो चन्द्रमापर अरुणोदयकालीन सूर्यकी शोभा छा रही हो। अपने अञ्चलसे मुख और सारे अङ्गोंको पोंछकर लहरियादार ओढनी और अपने हाथोंसे बनाया हुआ नया लहँगा स्वयं ही धारण कराया। फिर तिल, चावल, बतासे और मेवोंसे कुँवरिकी गोद भरी। सूरदास कहते हैं कि एक बार श्यामसुन्दरकी ओर और दूसरी बार राधाकी ओर निहारती हुई यशोदाजी शरीर और मन दोनोंसे प्रसन्न हो रही हैं, यह देखकर कि जोड़ी अत्यन्त सुन्दर है।

[२८]

मैं हरि की मुरली बन पाई ।
सुन जसुमति सँग छाँड आपनो कुँवर जगाय देन हौं आई ॥
सुन पिय बचन बिहँसि उठ बैठे अंतरजामी कुँवर कन्हाई ।
मुरली संग हुती मेरी पहुँची दे राधे वृषभान दुहाई ॥
मैं निहार नीची नहिं देखी चलो संग दऊँ ठौर बताई ।
बाढ़ी प्रीति मदन मोहन सों घर बैठे जसुमति बौराई ॥
पायो परम भावती जी को दोऊ पढ़े एक चतुराई ।
परमानंददास तिन बूझो जिन यह केलि जनम भर गाई ॥

श्रीवृषभानुनन्दिनी नन्दभवनमें आयीं और बोलीं—हे यशोदा मैया सुनो! मुझे श्रीकृष्णकी वंशी वनमें पड़ी हुई मिली है। मैं अपनी सहेलियोंका साथ छोड़कर उसे देने आयी हूँ। अपने लालको जगा दो! फिर तो मनकी बात जाननेवाले नन्दलाल उसकी बात सुनकर बिहँसते हुए उठ बैठे और बोले—अरी राधे! मुरलीके साथ मेरी

पहुँची भी थी। तुझे वृषभानुकी दुहाई है, उसे भी दे दे। श्रीराधाकिशोरीने कहा — मैंने नीचे ध्यानसे देखा नहीं, तुम साथ चलो तो वह स्थान तुम्हें दिखा दूँ, जहाँ मुरली मिली थी। श्रीकृष्णसे उनकी प्रीति प्रगाढ़ हो गयी थी, इसलिये दोनोंने घर बैठे ही यशोदाजीको झाँसा दे दिया। इसके पश्चात् श्रीकृष्णचन्द्र नन्द-भवनके बाहर चले आये। प्रियतम श्रीकृष्णको पा करके किशोरीको अपने अभीष्टकी प्राप्ति हो गयी। मनचाही बात बना लेनेकी कुशलताको देख करके यही कहना पड़ता है कि दोनोंने यह अद्भुत चतुरायी एकही गुरुसे पढ़ी है। परमानन्ददासजी कहते हैं कि इसका रहस्य उनसे जाकर पूछो, जिन्होंने इस लीलाको जीवन भर गाया है।

[२५]

बनी राधा गिरधर की जोरी।
मनहुँ परस्पर कोटि मदन रति की सुंदरता चोरी॥
नौतन स्याम नंद नंदन बृषभानु सुता नव गोरी।
मनहुँ परस्पर बदन चंद को पीवत तृषित चकोरी॥
कुंभनदास प्रभु रसिक लाल बहु बिधि रसिकिनी निहोरी।
मनहि परस्पर बढ्यो रंग अति उपजी प्रीति न थोरी॥

श्रीराधा-कृष्णकी जोड़ी सुन्दर बनी है। उनका सौन्दर्य देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो इन्होंने करोड़ों कामदेव और रतिकी सुन्दरता चुरा ली हो। नन्दनन्दन श्रीकृष्णके श्याम शरीरकी शोभा नित्य नूतन है ही और वृषभानुजा श्रीराधाके गोरे अङ्गोंकी छटा भी नित्य नयी ही दिखती है। वे एक-दूसरेके मुखचन्द्रको आमुग्ध नयनोंसे परस्पर ऐसे देख रहे हैं मानो प्यासी चकोरी चन्द्र-छविको पी रही हो। कुम्भनदासजी कहते हैं मेरे जीवन सर्वस्व रसिक लालने रसकी एकमात्र आश्रयभूता किशोरीसे प्रेमदान करनेके लिये विविध भाँतिसे प्रार्थना की। इसके फलस्वरूप उन दोनोंके मनोंमें पारस्परिक प्रीतिका उद्भव प्रचुर रूपमें होनेसे प्रगाढ़ आनन्द अधिकाधिक लहराने लगा।

[२६]

सघन कुंज की छाँह मनोहर सुमन सेज बैठे पिय प्यारी ।
अरस परस अंसनि भुज दीने नंद नंदन वृषभानु दुलारी ॥
नख सिख अंग सिंगार सुहावत इहि छबि सम नाहिन उपमा री ।
रस बस करत प्रेम की बतियाँ हँसि हँसि देत परस्पर तारी ॥
सनमुख सकल सहचरी ठाढ़ी बिहरत श्री राधा गिरिधारी ।
गोबिंददास निरखि दंपति सुख तन मन धन कीनो बलिहारी ॥

सघन कुञ्जकी अत्यन्त मनोहर छायामें कुसुम-शय्यापर प्यारी वृषभानुनन्दिनी श्रीराधा तथा प्रियतम नन्दनन्दन श्रीकृष्ण बैठे हैं। दोनों परस्पर स्पर्श करते हुए एक-दूसरेके कंधोंपर भुजाएँ रखे हुए हैं। श्रीअङ्गोंमें नखसे शिखतक शृङ्गार सुशोभित हो रहा है। इस छविकी कोई उपमा नहीं है। रसके वशीभूत होकर वे प्रेमालाप कर रहे हैं और हँस-हँसकर एक-दूसरेके हाथपर ताली बजा रहे हैं। श्रीराधा-कृष्ण विहारकर रहे हैं और सामने सब सखियाँ खड़ी हैं। गोविन्ददासने इन युगल विहारिणी-विहारीका यह आनन्दविहार देखकर अपना तन-मन-धन, इन दोनोंको उनपर न्यौछावर कर दिया।

[२७]

बैठे हरि राधा संग कुंज भवन अपने रंग
　　कर मुरली अधर धरे सारंग मुख गाई ।
मोहन अति ही सुजान परम चतुर गुन निधान,
　　जान बूझि एक तान चूक कैं बजाई ॥
प्यारी जब गह्यो बीन सकल कला गुन प्रवीन
　　अति नवीन रूप सहित तान वह सुनाई ।
वल्लभ गिरिधरन लाल रीझि दई अंक माल,
　　कहत भलें भलें लाल सुंदर सुखदाई ॥

श्रीराधा और श्रीकृष्ण अपने आनन्दमें निमग्न कुञ्जभवनमें बैठे हैं। श्रीकृष्णने अपने हाथोंकी मुरलीको अधरोंपर रखकर और अपने श्रीमुखसे फूँक भरकर सारंग रागकी एक तान छेड़ी। गोपी-मोहन श्रीकृष्ण बड़े ही सयाने एवं अत्यन्त चतुर हैं और (संगीतकलामें) गुणोंके भण्डार हैं; इसपर भी उन्होंने जान-बूझकर एक तान अशुद्ध रूपमें बजायी। तब प्यारीजीने वीणा लेकर उसी तानको अत्यन्त नये ढंगसे सही रूपमें बजाया। वे सभी कलाओं और गुणोंकी पण्डिता जो ठहरीं! (प्यारे श्रीकृष्ण तो यही चाहते थे कि प्यारी श्रीराधा बजायें और इसीलिये मुरली बजानेमें उन्होंने जान-बूझकर चूक की थी।) वल्लभजी कहते हैं कि श्रीराधाकी प्रशंसा करनेके मिससे सुखकी वर्षा करनेवाले गिरधारी प्यारे श्यामसुन्दरने रीझकर उनको हृदयसे लगा लिया और वे 'सुन्दर'-'सुन्दर' कह-कह करके उसकी सराहना करने लगे।

[२८]

इक टक रही नारि निहार।
कुंज बन श्री स्याम स्यामा बैठि करत बिहार॥
नैन सैन कटाच्छ सौं मिलि करत रंग बिलास।
नाहिं सोभा पार पावत बचन मुख मृदु हास॥
तरुनि श्री वृषभानु तनया तरुन नंद कुमार।
सूर मो क्यों बरनि आवै रूप रस सुख सार॥

कुञ्जभवनमें श्रीराधा और श्रीकृष्ण बैठे हुए विहार कर रहे हैं और गोपसुन्दरियाँ अपलक दृष्टिसे उन्हें निहार रही हैं। वे आँखोंकी तिरछी चितवनसे संकेत करते हुए परस्पर विचित्र लीला-विलास कर रहे हैं। उनके मुखकी मधुर वचनावली और मधु हासकी शोभाका कोई पार नहीं है। श्रीराधाकी किशोर अवस्था है और श्रीकृष्ण भी किशोर हैं। सूरदास कहते हैं कि मेरे द्वारा तो उस रूप, रस एवं सुखकी चरम सीमाका वर्णन हो ही कैसे सकता है!

[२९]

देखन देत न बैरिन पलकें।
निरखत बदन लाल गिरधर को बीच परत मानो बज्र की सलकें ॥
बन तें आवत बेनु बजावत गोरज मंडित राजत अलकें।
माथे मुकुट स्रवन मनि कुंडल ललित कपोलन झाँई झलकें ॥
ऐसे मुख देखन कों सजनी कहा कियो यह पूत कमल कें।
नंददास सब जडन की यह गति मीन मरत भाएँ नहि जल कें ॥

गोपी कहती हैं कि श्रीकृष्णकी शोभाको बैरिन पलकें एकटक नहीं देखने दे रही हैं। गिरिधरलालके श्रीमुखको देखते समय बीचमें वे इस प्रकार आ जाती हैं मानो वज्रकी सलाकें हों। श्रीकृष्ण वनसे वंशी बजाते हुए आ रहे हैं। गायोंके पैरसे उड़ी हुई धूलमें सनी उनकी अलकोंकी शोभा निराली है। उनके सिरपर मुकुट है, कानोंमें मणियोंका कुण्डल है और उनकी परछाईं सुन्दर कपोलोंमें प्रतिबिम्बित हो रही है। हे सखि! जलज-पुत्र ब्रह्माने ऐसे सुन्दर मुखके दर्शनके लिये यह क्या विघ्न उपस्थित कर दिया है? नन्ददासजी कहते हैं, सभी जड़ वस्तुओंकी यही दशा है। मछली बेचारी भी तो जलके लिये प्राण देती है, किन्तु जलको उसकी चिन्ता थोड़े ही होती है। (इसीलिये बहिनों! जलजसे उत्पन्न ब्रह्माको भी हमारा ध्यान थोड़े ही है।)

[३०]

तेरी भौंह की मरोरन तें ललित त्रिभंगी भये
अंजन दै चितयो भए जु स्याम बाम।
तेरी मुसकान देख दामिनी सी कौंध जात
दीन ह्वै जाचत प्यारी लेत राधे आधो नाम ॥
ज्यों ज्यों नचायो चाही तैसे हरि नाचत बलि
अब तो मया कीजे चलिये निकुंज धाम।
नंददास प्रभु बोलो तो बुलाय लाऊँ
उनको तो कलप बीते तेरी घरी जाम ॥

हे श्रीराधे ! तुम्हारी भ्रू-भङ्गिमासे ही श्रीकृष्णका सुन्दर त्रिभङ्गी रूप बन गया है और हे सुन्दरि ! जो तुमने अपनी आँखोंमें अञ्जन लगाकर श्रीकृष्णकी ओर देखा, इसीसे वे श्याम हो गये हैं। तुम्हारे हँसनेको देखकर उनके हृदय-पटलपर मानो बिजली-सी चमक जाती है। हे प्यारी ! श्रीकृष्ण दीन बनकर अस्फुट रूपसे तुम्हारा 'राधा-राधा' नाम ले रहे हैं और तुमसे प्रेमकी भीख माँगते हैं। श्रीकृष्णको तुम जैसे-जैसे नचाना चाहती हो, वे वैसे-वैसे ही नाचते हैं। मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ। अब तो कृपा करके निकुञ्जभवनमें पधारिये। नन्ददासजी कहते हैं कि यदि तुम आज्ञा दो तो प्रभु श्रीकृष्णको बुला लाऊँ; क्योंकि तुम्हारा एक घड़ी-भरका समय उनके लिये कल्पके समान बीत रहा है।

[७१]

जैसें तेरे नूपुर न बाजहीं
प्यारी ! पग हौले हौले धर ।
जागत ब्रज को लोग नाहीं सुनायबे जोग
हा हा री हठीली नेंक मेरो कह्यो कर ॥
जो लौं बन बीथिन माँहि सघन कुंज की परछाँहि
तो लौं मुख ढाँप चल कुँवर रसिक बर ।
नंददास प्रभु प्यारी छिनहूँ न होय न्यारी
सरद उज्यारी जामें जैहें कहूँ रर ॥

हे प्यारी सखि ! धीरे-धीरे चरण रख, जिससे तेरे नूपुर बजें नहीं। व्रजके लोग अभी जग रहे हैं। उन्हें अपने नूपुरोंका शब्द सुनाना उचित नहीं है। अरी हठीली ! थोड़ी मेरी बात मान ले। मैं हा-हा खाती हूँ। सघन कुञ्जोंकी छायासे युक्त वन-वीथियाँ जबतक नहीं आ जातीं, तबतक तू मुखको ढककर रसिकशिरोमणि नन्दकिशोरके पास चल। नन्ददासजी कहते हैं— प्यारी श्रीराधे ! प्रभुसे क्षणभरके लिये विलग न रह। आज शरद् ऋतुकी उजियाली रात है, उस चाँदनीमें तुम्हारा गोरा शरीर इस प्रकार मिल जायेगा कि किसीको तुम्हारा पता ही नहीं चलेगा।

[३२]

चलो क्यों न देखें री खरे दोउ कुंजन की परछाँही ।
एक भुजा गहि डार कदंब की दूजी भुजा गलबाँही ।।
छबि सों छबीली लपट लटक रहि कनक बेलि तमाल अरुझाई ।
हरिदास के स्वामी स्यामा कुंज बिहारी रंगे हैं प्रेम रंग माँही ।।

श्रीराधा और श्रीकृष्ण दोनों कुञ्जकी छायामें खड़े हैं। अरी! वहाँ चलकर यह शोभा क्यों न देखी जाये! वे अपनी एक भुजासे तो कदम्बकी डाल पकड़े हुए हैं और दूसरीको एक-दूसरेके गलेमें डाले हुए हैं। सुन्दरी राधाकी उनके अङ्गोंसे लिपटकर झूलनेकी-सी छवि अत्यन्त मनोहारिणी है। ऐसा लगता है मानो सोनेकी लता तमाल वृक्षके साथ उलझी हुई है। श्रीहरिदासजीके स्वामिनी-स्वामी किशोरी श्रीराधा और कुञ्जविहारी श्रीकृष्ण दोनों प्रेमके रंगमें रँगे हुए हैं।

[३३]

राधिका आज आनंद में डोलै ।
सांवरे चंद गोबिंद के रस भरी दूसरी कोकिला मधुर स्वर बोलै ।।
पहिर तन नील पट कनक हारावली हाथ लै आरसी रूप को तोलै ।
कहत श्रीभट्ट ब्रजनारि नागरि बनी कृष्ण के सील की ग्रंथिका खोलै ।।

आज श्रीराधिका आनन्दमें मग्न होकर विचरण कर रही हैं। श्यामसुन्दर श्रीकृष्णचन्द्रके रूपमें डूबी हुई ऐसे मीठे शब्दोंका उच्चारण कर रही हैं मानो कोई कोकिला मधुर स्वरमें बोल रही हो। नीली साड़ी पहनकर तथा हृदयपर स्वर्णमाला धारणकर वे अपने हाथोंमें दर्पण लिये हुए अपने सौन्दर्यको देख-देखकर मन-ही-मन उसका मूल्याङ्कन कर रही हैं। श्रीभट्टजी कहते हैं कि चतुरा व्रजाङ्गना श्रीराधाकी शोभा क्या ही सुन्दर बन पड़ी है और वे अपनी प्रसन्नतासे श्रीकृष्णके शीलकी गाँठको खोल रही हैं (अर्थात् उनका मन अपने हाथमें नहीं रह जाता)।

[२४]

कदम बन बीथिन करत बिहार ।
अति रस भरे मदन मोहन पिय तोर्यो प्रिया उर हार ।।
कनक भूमि बिथुरे गज मोती कुंज कुटी के द्वार ।
गोबिंद प्रभु हस्त करि पोवत श्रीब्रजराज कुमार ।।

कदम्ब-वनकी वीथियोंमें श्रीराधा और श्रीकृष्ण विहार कर रहे हैं। कामदेवको भी मोहित करनेवाले श्यामसुन्दरने अत्यन्त रसमें भरकर प्रियाजीके हृदयका हार तोड़ दिया। कुञ्ज-कुटीके द्वारकी स्वर्णभूमिपर गजमुक्ताके दाने बिखर गये। गोविन्ददासके स्वामी श्यामसुन्दर नन्दनन्दन श्रीकृष्ण अपने श्रीकरोंसे उस माला को पिरो रहे हैं।

[२५]

पासा खेलत हैं पिय प्यारी ।
पहिलो दाव पर्यो स्याम कौ पीत पिछोरी हारी ।।
स्याम कहे कछु तुमहु लगावो तब नकबेसर डारी ।
कल बल छल करि जीत्यौ चाहत लाल गोबरधनधारी ।।
अब की बेर पिय मुरली लगावौ तो खेलौ या बारी ।
भूषन सबै लगाय विट्ठल प्रभु हारे कुंज बिहारी ।।

श्रीप्रिया और श्रीप्रियतम पासा खेल रहे हैं। पहला दाँव श्रीबाबाजीका पड़ा और श्रीकृष्ण अपना पीताम्बर हार गये। तब श्रीश्यामसुन्दरने श्रीप्रियाजीसे भी कुछ दाँवपर रखनेको कहा और उन्होंने अपनी नाकका बेसर लगाया। गोवर्धनको धारण करनेवाले प्रियतम श्रीकृष्ण चतुराई, बल अथवा छलसे किसी भी प्रकारसे जीतना चाहते हैं। किशोरीजीने कहा कि हे प्यारे! इस बार अपनी मुरली दाँवपर लगाओ, तब खेलनेका साहस करो। श्रीविट्ठलजी कहते हैं कि मेरे सर्वस्व श्रीकुञ्जबिहारी एक-एक करके अपने सभी आभूषण हार गये।

[२६]

आज तेरी फबी अधिक छबि नागरी ।
माँग मोतिन छटा बदन पै कच लटा
नील पट घन घटा रूप गुन आगरी ॥
नयन कज्जल अनी कबरी लज्जित फनी
तिलक रेखा बनी अचल सौभाग री ।
नासिका सुक चंचु अधर बंधुक सम
बीजु दाड़िम दसन चिबुक पै दाग री ॥
वलय कंकन चूरि मुद्रिका अति हरि
बेसरि लटकि रही काम गुन आगरी ।
ताटंक मनि जटित किंकिनी कटि तटित
पोत मुक्ता दाम कुच कंचुकी लाग री ॥
मूक मंजीर ध्वनि चरन नख चंद्रमा
परम सौरभ बढ़त मृदुल अनुराग री ।
कहै कृष्णदास गिरिधरन बस किये
करत जब मधुर स्वर ललित वर राग री ॥

अरी निपुणे राधिके ! आज तेरी शोभा अत्यधिक भली लग रही है । माँग मोतियोंसे दमक रही है, मुखमण्डलपर अलकावली छुट रही है और तुम रूप एवं गुणकी निधान हो । तेरे शरीरपर मेघमालाके समान नीला वस्त्र शोभा पा रहा है । तेरी आँखोंमें बाणकी नोककी भाँति काजलकी पतली रेखा है । लहरदार वेणीसे नागिन भी लज्जित हो रही है और मस्तकपर लगा हुआ तिलक मानो सौभाग्यकी अचल लीक-सा दिखलायी दे रहा है । नासिका शुककी चोंचकी भाँति सुन्दर है, अधर दुपहरियाके पुष्पके समान लाल है, दाँत अनारके दानोंकी भाँति हैं एवं चिबुकपर काला दाग है । हाथोंमें अत्यन्त सुन्दर वलय, कङ्कण, चूड़ियाँ और अँगूठियाँ हैं और नाकमें रसिकलाओंकी निधि-स्वरूपा बेसर लटक रही है । कानोंमें मणिजटित कर्णफूल और श्रोणीपर बजनेवाली करधनी

सुशोभित है। वक्षःस्थलपर तू जो कञ्चुकी धारण किये हुए है, उसमें पोत और मोतीकी मालाएँ टँकी हुई हैं। नूपुरकी ध्वनि इतनी मन्द है कि वे मूक-से हो जाते हैं। चरण-नख चन्द्रमाकी भाँति चमक रहे हैं और शरीरसे अत्यधिक सुगन्ध निःसृत हो रही है। इस रूपके दर्शनसे हृदयका मृदुल स्नेह बढ़ने लगता है। कृष्णदासजी कहते हैं कि अत्यन्त सुन्दर एवं श्रेष्ठ रागमें मधुर स्वरसे जब तू गाती है तो तू गिरिधारी लालजीको वशमें कर लेती है।

[२७]

भाग्यवान वृषभानु सुता सी को तिय त्रिभुवन माहीं।
जाके पति त्रिभुवन मन मोहन दिये रहत गल बाँहीं॥
ह्वै अधीन सँग ही सँग डोलत जहाँ कुँवरि चलि जाहीं।
रसिक लख्यौ जो सुख वृंदावन सो त्रिभुवन में नाहीं॥

त्रिभुवनका मन मोहित करनेवाले श्रीकृष्ण जिनके पति हैं और गलबाँही डाले रहते हैं, उन श्रीवृषभानुनन्दिनीके समान भाग्यवान् को इस त्रिलोकीमें दूसरी कौन है? जहाँ-जहाँ किशोरी जाती हैं, उनके अधीन हुए प्यारे भी वहाँ-वहाँ उनके साथ-साथ घूमते रहते हैं। रसिकदासजीने वृन्दावनमें जो सुख देखा, वह तीनों भुवनोंमें भी अप्राप्य है।

[२८]

राधा मोहन करत बियारी।
एक कर थार सँवारे सुंदरि एक वेष एक रूप उजयारी॥
मधु मेवा पकवान मिठाई दंपति अति रुचिकारी।
सूरदास को जूठन दीनी अति प्रसन्न ललिता री॥

श्रीराधाकृष्ण ब्यालू (रात्रिका भोजन) कर रहे हैं। कई एक सुन्दरियाँ अपने हाथोंसे थाली सजानेमें लगी हैं। वे एक ही अवस्थाकी हैं और उनका एक-सा ही दीप्तियुक्त रूप है। श्रीप्रिया-प्रियतम दोनोंको अत्यन्त स्वादिष्ट लगनेवाली वस्तुएँ—जैसे मधु, मेवा, पकवान और मिठाई आदि थालमें सजी हुई हैं। ललिताजीने अत्यन्त प्रसन्न होकर सूरदासको जूठन-प्रसाद प्रदान किया।

[३९]

अँचवन करत लाड़िली लाल ।
कंचन झारी गहत परसपर श्रीराधा गोपाल ॥
जल मुख लेतहि हँसत हँसावत देखत सखिन के जाल ।
राधा माधव केलि करत भए श्रीभट परम बिहाल ॥

किशोरी राधा और श्रीकृष्ण भोजनके पश्चात् आचमन कर रहे हैं। एक दूसरेको आचमन करानेके लिये वे अपने-अपने हाथोंमें सोनेका जलपात्र लेते हैं। मुखमें जल लेते ही एक दूसरेको स्वयं हँस-हँसकर हँसानेकी चेष्टा करते हैं। झुण्ड-को-झुण्ड सखियाँ इस मधुर लीलाको देख रही हैं। श्रीराधामाधवको इस प्रकार क्रीड़ा-रत देखते-देखते श्रीभट्टजी अत्यन्त विह्वल हो गये।

[४०]

बीरी सरस सखी रुचि दीनी ।
लई प्रीति कर प्रीतम प्यारी अधरन लाली लसी नवीनी ॥
मृदु मुसकात बात हँसि बोलत सुनत सहेली रस में भीनी ।
सरस माधुरी सयन करन की जुगल लाल मन इच्छा कीनी ॥

सखीने रसभरे पानके बीड़ेको अत्यन्त प्रेमसे निवेदित किया। श्रीप्रिया-प्रियतमने उसे प्रीतिपूर्वक हाथोंमें लेकर आरोग लिया और उनके अधरोंपर एक नयी लालिमा छा गयी। वे मन्द स्मितके साथ हँस-हँस करके बात कर रहे हैं, जिसे सुनकर सखियाँ रसमें डूब जाती हैं। सरसमाधुरीजी कहते हैं कि फिर दम्पतिके मनमें शयन करनेकी इच्छा उत्पन्न हो गयी।

[४१]

प्यारी पियहि सिखावति बीना ।
तान बंधान कल्यान मनोहर इत मन देहु प्रबीना ॥

लेत सँभारि सँभारि सुघर बर नागरि कहत फबी ना ।
बिट्ठल विपुल बिनोद बिहारी को जानत भेद कबी ना ।।

प्रियाजी श्रीकृष्णको वीणावादन सिखा रही हैं। वे कहती हैं कि इस 'कल्याण' रागका स्वर-संधान अत्यन्त मनोहर है। हे प्रवीण श्यामसुन्दर! इस ओर अपना ध्यान केन्द्रित करो। अत्यन्त चतुर श्रीकृष्ण सँभल-सँभलकर बजा रहे हैं, किन्तु नागरी राधिकाजी कहती हैं कि ठीक जमा नहीं। श्रीविट्ठलविपुलजी कहते हैं कि श्रीकृष्णके इस विनोदके रहस्यको बड़े-बड़े ज्ञानी भी नहीं समझते।

[४२]

आज गुपाल रास रस खेलत पुलिन कलपतरु तीर री सजनी ।
सरद बिमल नभ चंद बिराजत रोचक त्रिबिध समीर री सजनी ।।
चंपक बकुल मालती मुकुलित मत्त मुदित पिक कीर री सजनी ।
लेत सुधंग राग रागिनि को ब्रज जुवतिन की भीर री सजनी ।।
मघवा मुदित निसान बजायौ ब्रत छाँड्यौ मुनि धीर री सजनी ।
हित हरिवंश मगन मन स्यामा हरत मदन धन पीर री सजनी ।।

हे सखि! आज यमुनाके पुलिनवर्ती कल्पवृक्षोंके समीप गोपाल श्रीश्यामसुन्दर रासकी रसमयी क्रीड़ामें निमग्न हैं। शरदके स्वच्छ आकाशमें चन्द्रमा सुशोभित है तथा हृदयको आह्लादित करनेवाला शीतल, मन्द एवं सुगन्धित पवन चल रहा है। चम्पा, मौलश्री और मालती आदिके पुष्प खिले हुए हैं। कोकिल एवं शुक आनन्दमें डूबे हुए मतवाले हो रहे हैं। वहाँ यूथ-की-यूथ व्रजबालाएँ शुद्ध स्वरूपमें राग-रागिनियोंका आलाप ले रही हैं। आकाशमें इन्द्रने भी आनन्दित होकर नगाड़े बजाये। इस महान् उत्सवसे आकर्षित होकर धैर्यवान् मुनियोंने भी अपने संयम-नियमादिको बहा दिया। श्रीहितहरिवंशजी कहते हैं कि उल्लासमें भरकर श्रीराधा प्रियतम श्रीश्यामसुन्दरकी अत्यन्त प्रीति-जनित गम्भीर व्याकुलताको प्रशमित कर रही हैं।

[८३]

रास मंडल रच्यो रसिक हरि राधिका
तरनिजा तीर बानीर कुंजे ।
फूले जहाँ नीप नव बकुल कुल मालती
माधुरी मृदुल अलि पुंज गुंजे ।।
सुमन के गुच्छ अलि सुच्छ चल बात बल
तरु मनो चहुँ दिसि चँवर करहीं ।
करत रव सारि सुक पिक सु नाना विहँग
नचत केकि अधिक मनहि हरहीं ।।
त्रिगुन जहाँ पवन को गवन नित ही रहत
बहत स्यामल तरनि चल तरंगा ।
बिबिध फूले कमल कोक कलहंस कुल
करत कल कुणित अरु जल बिहंगा ।।
हेम मंडल रचित खचित नाना रतन
मनहुँ भू करन कुंडल बिराजे ।
बंस बीनादि मुहचंग मिरदंग बर
सबन मिलि मधुर धुनि एक बाजे ।।
नचत रस मगन बृषभानुजा गिरिधरन
बदन छबि देखि सुधि जात रति मदन की ।
मुकुट की थरहरनि पीत पट फरहरनि
तत्त थेई थेई करनि हरनि सब कदन की ।।
दसनि दमकनि हँसनि लसनि अंग अंग की
अधर बर अरुन लखि उपमा को है ।
दृग जलज चलनि ढिग कुटिल अलकनि झुलनि
मनहुँ अलि कुलन की पाँति सोहै ।।

लाग अरु डाट पुनि उरप उरमेइ तिरप
एक एक गति लेत भारी ।
करत मिलि गान अति तान बंधान सौं
परस्पर रीझि कहैं वार्यो वारी ॥
चारु उर हार बर रतन कुंडल ललित
हीर बर बीर स्रवननि सुहाई ।
नील पट पीत तन गौर स्यामल मनौ
परस्पर घन अरु दामिनि दुराई ॥
सखी चहुँ दिसि बनी कनक चंपक तनी
चंद बदनी इक एक तें आगरी ।
नचत मंडल किए चित्त दुहु तन दिए
भूलि गई सकल अप अपनी सुधि नागरी ॥
रमत इहि भाँति नित रसिक सिरमौर दोऊ
संग ललितादि लिए सुघरि सुंदरि अली ।
मनसि बृंदावन बसहुँ जीवन धना
ब्रजराज सून बृषभानुजू की लली ॥

यमुनाके किनारे वेत्र-कुञ्जमें रसिकशिरोमणि श्रीश्यामसुन्दर एवं श्रीराधाने रास-मण्डलकी रचना की है। वहाँपर कदम्ब, मौलश्री एवं मालतीके नये-नये असंख्य पुष्प खिल रहे हैं। उनके माधुर्यसे आकृष्ट होकर भौंरोंके समूह मृदुल गुञ्जार कर रहे हैं। फूलोंके गुच्छोंको स्पर्श करता हुआ अत्यन्त निर्मल पवन चल रहा है। उसके प्रभावसे हिलते हुए हरे-हरे वृक्ष ऐसे लग रहे हैं मानो चारों ओरसे चँवर डुला रहे हैं। मैना, तोता, कोयल तथा और भी अनेक सुन्दर-सुन्दर पक्षी कलरव कर रहे हैं। नृत्य करते हुए मोर चित्तको और भी अधिक खींच लेते हैं। शीतल, मन्द एवं सुगन्धित समीरका वहाँ सदा ही संचार होता रहता है। उसकी गतिसे तरंगें चञ्चल हो उठती हैं और ऐसी चञ्चल तरंगोंसे युक्त श्यामलवर्णा यमुनाजी बहती रहती हैं। यमुनाजीमें विविध प्रकारके कमल (जैसे उत्पल, कुशेशय, इन्दीवर इत्यादि) खिले हुए हैं तथा

चक्रवाक, कलहंसोंका समूह एवं अन्य जातिके जल-पक्षी भी मधुर स्वर कर रहे हैं। रासकी गोलाकार स्वर्ण-वेदी नाना रत्नोंसे जड़ी हुई है। वह ऐसी लगती है मानो पृथ्वीका कर्ण-कुण्डल हो। बाँसुरी एवं वीणादिक तार-यन्त्र, मुहचंग और अच्छे-अच्छे मृदंग—ये सभी मिलकर एक स्वरमें मधुर ध्वनि उत्पन्न कर रहे हैं। रसमें मग्न होकर राधा-माधव नाच रहे हैं। उनके मुखकी शोभा देखकर रति और काम भी बेसुध हो जाते हैं। मुकुटके थरहरानेसे, पीतपटके फरहरानेसे तथा ताता-थेइके उच्चारणसे जो झाँकी उभरी, वह सारे क्लेशोंका निवारण करनेवाली है। दाँतोंकी चमक, मन्द हास्य, प्रत्येक अङ्गकी शोभा तथा मनोहर अधरोंकी अरुणिमा—इन सबके दर्शनकी तुलनामें और क्या है? कमलदल-से सुन्दर एवं चपल नेत्रोंके समीप ही कुञ्चित केशकी लटें ऐसी झूल रही हैं मानो भ्रमरोंकी पंक्तियाँ सुशोभित हों। स्नेह-पूरित प्रतिस्पर्धासे वे उरप-तिरप आदि एक-एक गति-विशेषको बड़े ही सुन्दर ढंगसे प्रदर्शित करते हैं। वे बंधानयुक्त तान लेते हुए परस्पर मिलकर अत्यन्त सुन्दर गा रहे हैं और एक-दूसरेपर मुग्ध होकर 'बलिहारी जाऊँ' कह रहे हैं। सुन्दर वक्षःस्थलपर रत्नोंका मनोहर हार है और हे सखि! कानोंमें श्रेष्ठ हीरेके बड़े ही सुन्दर कुण्डल सुशोभित हो रहे हैं। श्रीराधिकाके गोरे अङ्गोंपर नीला परिधान एवं श्रीकृष्णके श्याम शरीरपर पीताम्बर ऐसे लग रहे हैं मानो एक ओर बादलने बिजलीको अपनी गोदमें छिपा लिया है और दूसरी ओर विद्युच्छटाने वारिदमालाको आक्रोडित कर लिया है। उन्हें चारों ओरसे सोने एवं चम्पाके फूल-जैसे वर्णवाली चन्द्रमुखी सखियाँ घेरे हुए हैं। वे सब शोभामें एक-से-एक बढ़कर हैं। वे परम प्रवीण सखियाँ गोलाकार मण्डल बनाकर नाच रही हैं। उनका चित्त राधामाधवमें ऐसा लीन है कि सब अपनी-अपनी सुधि खो बैठी हैं। ललितादिक सखियोंको साथ लेकर रसिकोंके शिरोभूषण ये दोनों इस प्रकार नित्य ही विहार किया करते हैं। ये सभी सखियाँ चतुर तथा सुन्दर हैं। वृन्दावनदेवजी कहते हैं कि हे मेरे जीवनधन व्रजराज लाडिले एवं वृषभानु लाडिली! तुम दोनों मेरे हृदय-कमलमें निवास करो।

[८८]

राधिका सम नागरी नवीन को प्रवीन सखी,
रूप गुन सुहाग भाग आगरी न नारि।

सहन नागलोक भूमि देवलोक की कुमारि,
प्यारी जू के रोम ऊपर डारो सब वारि ॥
आनंद कंद नंद नंदन जाके रस रंग रच्यो,
अंग बर सुधंग नाचति मानतु अति हारि ।
ताके बल गरब भरे रसिक व्यास से न डरे,
लोक बेद कर्म धर्म छांड़ि मुकुति चारि ॥

सखि ! श्रीराधिकाके समान चतुर नववयस्का एवं निपुणा कौन है ? किसी भी ललनाको उन जैसा रूप, गुण, प्रियतमका प्यार एवं सौभाग्य नहीं प्राप्त है। प्यारी राधिकाके एक रोम पर ही सकल लोक, नागलोक, मर्त्यलोक तथा देवलोककी समस्त कुमारियोंको न्यौछावर किया जा सकता है। आनन्दकन्द नन्दनन्दन श्रीकृष्ण प्रियतमा राधाके रस-रंगमें इतने निमग्न हैं कि अपनी प्रियाको रस प्रदान करनेके लिये उन्होंने रास-रंगका आयोजन किया। (रास-मण्डलपर) श्रीप्रियाजी इतना सुन्दर नृत्य कर रही हैं कि अङ्ग-अङ्गकी निपुणताको देख-देख करके प्रियतम अत्यन्त विस्मित-विथकित हो रहे हैं। उन्हींके बलपर गर्वित रहकर व्यास जैसे रसिक किसीसे भी नहीं डरते। उन्होंने लोक एवं वेद, धर्म एवं कर्म तथा चारों प्रकारकी मुक्तियोंको तिलाञ्जलि दे दी है।

[७५]

बेसर कौन की अति नीकी ।
होड परी प्रीतम अरु प्यारी अपने अपने जी की ॥
न्याव पर्यो ललिता के आगे कौन सरस को फीकी ।
नंददास बिलग जिन मानो कछु एक सरस लली की ॥

प्रियतम श्रीकृष्ण एवं प्यारी श्रीराधिका, दोनोंने अपने-अपने मनकी बात कहकर परस्परमें यह होड़ बदी कि किसके नाककी बेसर अधिक सुन्दर है। न्यायपूर्वक सच्ची बात कहनेका कार्य श्रीललिताजीके आगे रखा गया, वे ही निर्णय करें कि कौन सुन्दर है और कौन साधारण। नन्ददासजी कहते हैं कि ललिताजीने बड़े संकोचसे यह

उत्तर दिया कि यदि बुरा न मानो तो मेरी समझके अनुसार लाडिलीकी बेसर कुछ अधिक मनोहारिणी है।

[८६]

तुव मुख कमल नैन अलि मेरे।
पलक न लगत पलक बिन देखे अरबरात अति फिरत न फेरे ॥
पान करत मकरंद रूप रस भूलि नहीं फिर इत उत हेरे।
भगवतरसिक भए मतवारे घूमत रहत छके मद तेरे ॥

हे राधारानी ! तुम्हारा मुख कमलके सदृश है और मेरे नेत्र भौंरेके समान। बिना दर्शन किये एक क्षणके लिये भी मेरी पलकें लगती नहीं। मेरे नयन दर्शनके लिये अति अकुलाये रहते हैं और हटानेपर भी वहाँसे हटते नहीं। रूप-सुधा-रूपी मकरन्द-रसका पान करते समय वे ऐसे तल्लीन हो जाते हैं कि भूलकर भी इधर-उधर नहीं देखते। भगवतरसिकजी कहते हैं कि ये पागल-से हो गये हैं और तुम्हारे प्रेमका कुछ ऐसा नशा इनपर चढ़ गया है कि निरन्तर घूमते ही रहते हैं।

[८७]

तुव मुख चंद चकोर ए नैना।
अति आरत अनुरागी लंपट भूलि गई गति पलहुँ लगे ना ॥
अरबरात मिलिबे को निसि दिन मिलेइ रहत मानो कबहुँ मिलै ना।
भगवतरसिक रसिक की बातैं रसिक बिना कोउ समुझि सकै ना ॥

हे राधारानी ! तुम्हारा मुख चन्द्रमाके समान है और मेरे ये नयन चकोर-सदृश इतने अनुरक्त एवं आसक्त हैं कि बिना देखे अत्यन्त व्याकुल हो जाते हैं। इनकी सुधि-बुधि खो गयी है। पलकें तो एक क्षणके लिये भी नहीं पड़ती। मिलनेके लिये ये रात-दिन व्याकुल रहते हैं और मिले रहनेपर भी इन्हें ऐसा लगता है मानो कभी मिले ही नहीं। भगवतरसिकजी कहते हैं कि रसिककी बातोंको बिना रसिकके दूसरा कोई समझ नहीं सकता।

[४८]

राधा प्यारी तुमहिं लगत हौं मैं कैसो ।
बूझन को अभिलाष रहत मन सकुच लगत मन ही मन ऐसो ।।
भोरो री गिनत चतुर कै भामिनि अपने ही बदन बखानौ सो।
वृंदावन हित रूप पै बलि जाऊं तुम जो मिलि मेरो भाग सो ऐसो ।।

हे राधा प्यारी ! मैं तुम्हें कैसा लगता हूँ ? मनमें यह बात पूछनेकी इच्छा रहती है, पर मन-ही-मन बहुत संकोच लगता था। मैं भोला हूँ या चतुर, हे सुन्दरि ! इसका वर्णन अपने ही मुखसे करो। हितवृन्दावनदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरने फिर निवेदन किया कि मैं तुम्हारे रूपपर न्यौछावर हूँ। तुम जो मुझे मिली हो, यह मेरा कुछ अनोखा सौभाग्य है।

[४९]

प्रीतम तुम मेरे दृगन बसत हो ।
कहा भोरे ह्वै कै पूछत हौ कै चतुराई करि जु हँसत हो ।।
लीजिए परखि सरूप आपनो पुतरिन मैं प्यारे तुमहि लसत हो ।
वृंदावन हित रूप बलि गई कुंज लडावत हिय हुलसत हो ।।

राधाजी उत्तर देती हैं कि हे प्रियतम ! तुम तो मेरी आँखोंमें बसते हो। क्या भोले बनकर वास्तवमें ऐसा प्रश्न कर रहे हो अथवा चतुराईसे विनोद कर रहे हो ? तुम अपने रूपकी परीक्षा कर लो। मेरी पुतलियोंमें प्यारे ! तुम्हीं सुशोभित हो रहे हो। हितवृन्दावनदासजी कहते हैं कि राधाजीने फिर कहा कि मैं भी तुम्हारे रूपपर न्यौछावर हूँ। कुञ्जमें तुम जब लाड लडाते हो, तब हृदय उल्लाससे भर जाता है।

[५०]

आज बने सखि नंद कुमार ।
बाम भाग वृषभान नंदिनी ललितादिक गावें सिंह द्वार ।।

कंचन थार लिये जु कमल कर मुक्ताफल फूलन के हार।
रोरी को सिर तिलक बिराजत करत आरती हरष अपार॥
यह जोरी अबिचल बृंदाबन देत असीस सकल ब्रजनार।
कुंज महल में राजत दोऊ परमानंद दास बलिहार॥

हे सखि! आज नन्दनन्दनकी निराली ही शोभा है। बायीं ओर श्रीराधारानी विराज रही हैं और ललितादिक सखियाँ मुख्य द्वारपर खड़ी गा रही हैं। वे अपने कमल-से हाथोंपर सोनेकी थालियोंमें मोतीके हार एवं फूलोंकी मालाएँ लिये हुए हैं। (वहाँ से वे कुञ्ज-भवनमें चली आती हैं।) श्रीराधा-माधवके भालपर रोलीका तिलक सुशोभित हो रहा है और सखियाँ आनन्दमें भरकर आरती कर रही हैं। समस्त ब्रजबालाएँ यही आशिष दे रही हैं कि वृन्दावनमें यह जोड़ी नित्य निवास करे। इस प्रकार दोनों कुञ्ज-भवनमें विराजमान हैं, दासपरमानन्द उनपर न्यौछावर हैं।

[८६]

खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते॥
उड़ उड़ जात निकट स्रवनन के उलटि फिरत ताटंक फँदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके नाँतर अब उड़ जाते॥

खञ्जनके समान चपल श्रीराधाके नयन प्रियतमकी रूप-मधुरीका पानकरके मतवाले हो रहे हैं। वे अत्यन्त सुन्दर, चञ्चल और नुकीले नेत्र पलक-रूपी पिंजरेमें बंद नहीं रह पा रहे हैं। वे उड़-उड़ करके अर्थात् लपक-लपक करके कानोंके पास जाते हैं; परन्तु आगे कर्णफूल रूपी फंदेको पा करके लौट आते हैं, बढ़ नहीं पाते। सूरदासजी कहते हैं कि मेरा तो यह अनुमान है कि ये अञ्जन रूपी डोरीसे बँधे हुए हैं, नहीं तो कभीके उड़कर प्रियतमके पास पहुँच जाते।

[५२]

अब पौढ़न को समय भयो।
इत ढुर गई द्रुमन की छैंयाँ उत ढुरि चंद गयो॥
पौढ़ि रहे दोउ सुखद सेज पर बाढ़त रंग नयो।
रसिक बिहारि बिहारिनि पौढ़े यह सुख दृगन लयो॥

अब रात्रिमें शयन करनेका समय हो गया। इधर वृक्षोंकी छाया ढल गयी है और उधर चन्द्रमा भी अस्ताचलकी ओर चले गये हैं। सुखदायनी शय्यापर दोनों लेटे हुए हैं। प्रतिक्षण अभिनव आनन्दकी अभिवृद्धि हो रही है। कवि 'रसिक' कहते हैं कि लीलाविहारी श्रीकृष्ण और विहारनिमग्ना राधा, दोनों ही शय्यापर पौढ़े हुए हैं। इस झाँकीके दर्शनका सुख आँखोंको प्राप्त हुआ। (कह कैसा अनुपम सौभाग्य है!)

[५३]

बिहारिनि अलकलड़ैती हो अलकलड़े सुकुमार।
अलकलड़े मोहन मंदिर में अलकलड़ोई बिहार॥
अलकलड़ी उरझनि दोउन की अलकलड़ोई प्यार।
अलकलड़ी हरिप्रिया निहारति अलकलड़ो सुखसार॥

जिस प्रकार विहारनिमग्ना श्रीराधा सबकी स्नेहास्पदा हैं, उसी प्रकार अत्यन्त कोमल अङ्गोंवाले श्रीकृष्ण भी सबके स्नेह-भाजन हैं। मनोहर एवं स्नेह-सदन केलि-मन्दिरमें उनका विहार भी बड़ा ही स्नेह-सिक्त है। उनका परस्पर लिपटना भी स्नेहपूर्ण है और उनका प्यार तो दुलारभरा है ही। स्नेहसने श्रीहरिप्रियाजी लाड-चावभरे उस केलि-सुख-सारको निहारते रहते हैं।

[५४]

चाँपत चरन मोहन लाल।
पलका पौढ़ी कुँवरि राधे सुंदरी नव बाल॥

कबहुँ कर गहि नयन मिलवत कबहुँ छुवावत भाल ।
नंददास प्रभु छवि निहारत प्रीति के प्रतिपाल ॥

नवयौवना एवं सौन्दर्यमण्डिता राधाकिशोरी पर्यङ्कपर पौढ़ी हुई हैं। मदनमोहन उनके पद सहला रहे हैं। उनके चरणोंको पकड़कर कभी वे उन्हें अपनी आँखोंपर रखते हैं और कभी उन्हें मस्तकपर धारण करते हैं। नन्ददासके स्वामी एवं प्रेमका निर्वाह करनेमें कुशल श्रीकृष्ण अपनी प्यारीके रूप-दर्शनका सुख लूट रहे हैं।

[५५]

धनि धनि लाडिली के चरन ।
अति ही मृदुल सुगंध सीतल कमल के से बरन ॥
नख चंद चारु अनूप राजत जोत जगमग करन ।
कुणित नूपुर कुंज बिहरत परम कौतुक करन ॥
नंद सुत मन मोद कारी सुरत सागर तरन ।
दास परमानंद छिन छिन स्याम ताकी सरन ॥

प्यारी श्रीराधाके चरण परम धन्य हैं। वे अत्यन्त कोमल हैं। उनमें सुन्दर सुवास है। वे शीतल हैं। उनका वर्ण कमलके समान है। नखरूपी चन्द्रमाओंका सौन्दर्य अनुपम है। उनमेंसे जगमग करती हुई एक ज्योति निकल रही है। कुञ्जोंमें जिस समय वे विहार करती हैं, उनके नूपुर बज उठते हैं। ये चरण बड़े ही क्रीडाप्रिय हैं। वे श्रीकृष्णके मनको आनन्द देनेवाले हैं तथा उन्हें प्रेमरूपी विशाल सागरके अन्तिम छोरतक पहुँचा देनेके लिये नौकाके समान हैं। परमानन्ददासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर उन्हींकी शरणमें रहते हैं।